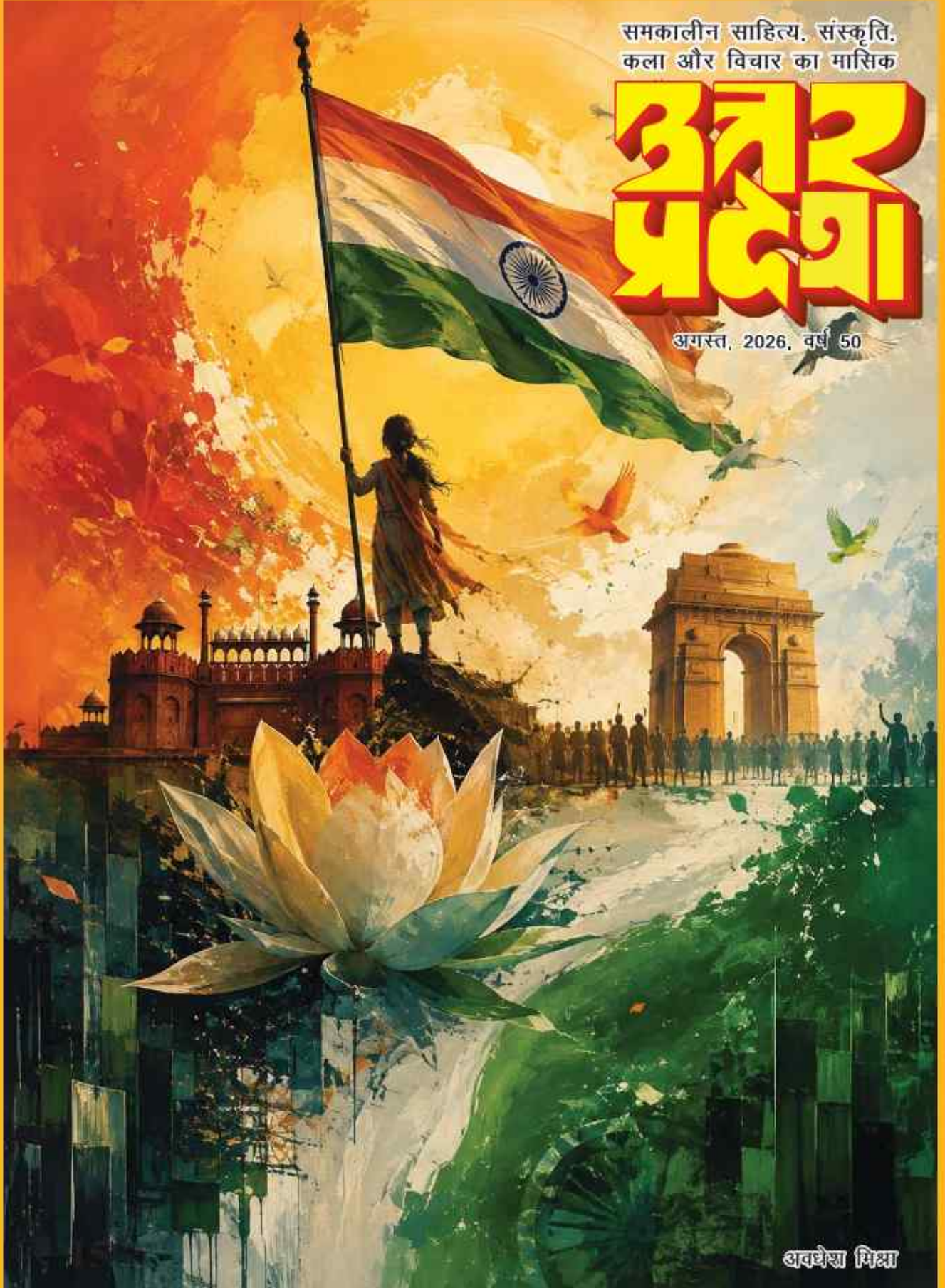


समकालीन साहित्य, संस्कृति,
कला और विचार का मासिक

उत्तर प्रदेश

अगस्त, 2026, वर्ष 50



रक्त का अभिषेक

—वी.के. श्रीवास्तव

कण—कण बन बलिदान चढ़ूँ, या खंड—खंड बंट जाऊँ मैं,
कुल—गौरव की मर्यादा पर, कोई आंच न लाऊँ मैं।
सुन माँ! या ता लौटूँगा मैं, लिपट तिरंग के पावन पट में,
या सरहद पार विजय—केतु का, अंबर तक लहराऊँ मैं।

तेरे आँचल की छाया ने, मुझको वज्र बनाया है,
केसरिया बाने की खुशबू, रोंगटे—रोंगटे लाया है।
सिंह—नाद हूँ मैं समर का, कायरता से नाता क्या?
मृत्यु सखी है साथ खड़ी, फिर काल चक्र का डर ही क्या?
अरि—मस्तक का अर्ध्य चढ़ाकर, मरुथल को नहलाऊँगा,
पुरखों के ऊँचे भाल को, और भी ऊँचा कर जाऊँगा।

अंगारों की सेज सजी हो, या काँटों का हो पहरा,
रंग भक्ति का चढ़ा हृदय पर, सिंदूरी और गहरा।
माँ! नैनो के जल से अपनी, ममता को न लजाना तुम,
वीर—प्रसूता कहला कर ही, गर्व की ज्योत जगाना तुम।
जो इंच—इंच कट जाऊँ तो भी, शब्द "जय भारत" निकलेगा,
मेरी राख के हर जरे से, एक नया सूरज निकलेगा।

हिमगिरि की उत्तुंग शिखाएँ, मेरे प्रण की साक्षी हैं,
सिंधु—लहर की गर्जन बोले, हम युग—युग के रक्षी हैं।
वतन की माटी मांग रही है, शौर्य का चंदन—टीका आज,
मर्यादा की रक्षा हित ही, गूँजेगा अब रण—नाद आज।
बौनी हो जाती है मौत, जहाँ संकल्प प्रबल होता है,
देश—प्रेम का पथ ही केवल, सबसे अधिक विमल होता है।

मैं लौटूँगा बन कर बसंत, या अमर ज्योति की एक लहर,
तेरी लोरी की थाप सुनूँगा, बन कर शीतल—शांत पहर।
इतिहासों के स्वर्ण—पृष्ठ पर, हस्ताक्षर कर जाऊँगा,
होगा तिरंगा साथ मेरे, जब धरा छोड़ कर जाऊँगा।
शपथ मुझे है उस माटी की, जिसे शीश नवाता हूँ,
प्राणों की आहुति दे कर भी, राष्ट्र—धर्म निभाता हूँ।

मो. : 8299477589

ईमेल : vimalprg@gmail.com



अनुक्रम

विमर्श

- वंदे मातरम् और राष्ट्रीय साहित्य चेतना □ प्रो. गौरी त्रिपाठी / 3

आलेख

- आत्मा का उत्सव है स्वतंत्रता दिवस □ अमल मिश्र / 8
- 1857 का विद्रोह □ राज गोपाल सिंह वर्मा / 12

संस्मरण

- महान क्रांतिकारी शैलबाला दीदी □ मंजरी तिवारी / 15

कहानियाँ

- बारिश और तिरंगा □ अनुजीत इकबाल / 17
- प्रेम और स्वाभिमान □ सविता दास / 21

कविताएँ

- रक्त का अभिषेक □ वी.के. श्रीवास्तव / आवरण-2
- यश मालवीय के नवगीत □ यश मालवीय / आवरण-3
- बता हिन्द वासी कहाँ तेरी मंजिल? □ एस.एन. सिंह / 26
- वंदे मातरम् □ भारती मिश्रा / 28
- कुछ लोग □ कौशिकी भारद्वाज / 29

क्षणिकाएँ

- धरती / स्वाति बरनवाल / 30
- नारी / नंदिनी जोशी / 30
- सुख / आशीष द्विवेदी साथी / 30

लघुकथा

- सपनों की दुनिया □ विजय श्रीवास्तव 'मिर्जापुरी' / 16
- रिटर्न गिफ्ट □ डॉ. सत्यनारायण 'सत्य' / 32

पुस्तक समीक्षा / विशेष लेख

- आधुनिक युग में वंद विद्यालयों की प्रासंगिकता □ नीलम कुमारी सिंह / 31

संरक्षक एवं मार्गदर्शक :

□ संजय प्रसाद

अपर मुख्य सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी :

□ विशाल सिंह

सूचना निदेशक, उत्तर प्रदेश

□ अरविन्द कुमार मिश्र

अपर निदेशक, सूचना

□ चन्द्र विजय वर्मा

सहा. निदेशक (प्रकाशन)

प्रभारी सम्पादक सूचना :

□ दिनेश कुमार गुप्ता

सहयोग :

□ अजय कुमार द्विवेदी

सहयुक्त सम्पादक

आवरण :

अवधेश मिश्रा

भीतरी रेखांकन :

अवधेश मिश्रा / वंदना पवार

सम्पादकीय संपर्क :

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल
उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
ईमेल : upmasik@gmail.com

दूरभाष : कार्यालय :

ई.पी.ए.बी.एक्स 0522-2239132-33,
2236196, 2239011
मो. : 9412674759

उत्तर प्रदेश

□ वर्ष-50 □ अंक-90

□ अगस्त, 2026



पत्रिका information.up.nic.in वेबसाइट पर उपलब्ध है।

- एक प्रति का मूल्य : पंद्रह रुपये
- वार्षिक सदस्यता : एक सौ अस्सी रुपये
- द्विवार्षिक सदस्यता : तीन सौ साठ रुपये
- त्रैवार्षिक सदस्यता : पांच सौ चालीस रुपये

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे मासिक पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

—सम्पादक

आवर्तन

साहित्य हमेशा स्वतंत्रता का अभिलाषी रहा है। साहित्य को कभी गुलामी पसंद नहीं रही। वह तो असतों मा सदगमय की यात्रा है। मतलब साहित्य हमेशा ही सत्योन्मुख रहा है। असत्य से सत्य की यात्रा ही सही मायने में साहित्य का पथानुकरण है। अंधकार से प्रकाश की और मृत्यु से अमरत्व यानी जीवन की यात्रा ही दरअसल साहित्य लेखन का अभीष्ट रहा है। साहित्य और उससे जुड़े लोगों ने हमेशा ही सकारात्मकता की राह चुनी है। निराशा और हताशा के दलदल से जीव जगत को निकालते रहने का सतत प्रयास किया है। देश की आजादी में भी भारतीय साहित्यकारों की बड़ी भूमिका रही है। उसने हर मौके पर यह साबित किया है कि साहित्य केवल मन के रंजन का ही हेतु नहीं है, वह आत्मा को प्रकाशित करने का माध्यम है। लोगों के दिलों दिमाग को झकझोरने की सामर्थ्य केवल साहित्य में ही है। आजादी के आंदोलन में भाग लेने और अंग्रेजों की जेल यातना सहने वाले ज्यादातर क्रांतिकारी साहित्यकार रहे हैं। कुछ साहित्यकारों और पत्रकारों ने आजादी के दीवानों को न केवल शरण दी, उन्हें अंग्रेजों के जुल्मों सितम से बचाया बल्कि ऐसा करने का पर्याप्त खामियाजा भी भुगता लेकिन कभी उफ नहीं किया। कभी उनके चेहरे पर शिकन नहीं उभरी। साहित्यकारों ने तमाम मुश्किलें झेलीं, आर्थिक झंझावात झेले लेकिन कभी भी अपने कर्तव्य से मुंह नहीं मोड़ा। मां भारती को गुलामी की बेड़ियों से मुक्त कराने के अपने संघर्ष को कभी कमजोर नहीं होने दिया। पत्रकारिता के पुरोधा गणेश शंकर विद्यार्थी के एक कदम तो जेल में ही रहे। अंग्रेज उन पर अत्याचार करते ही रहे। कानपुर के प्रताप अखबार के कार्यालय में चंद्रशेखर आजाद, पंडित राम प्रसाद विस्मिल, सरदार भगत सिंह आदि क्रांतिकारियों का रुकना-ठहरना होता रहा। भगत सिंह तो प्रताप में आजादी के आंदोलन के दिनों में प्रताप में अपनी कहानियां और लेख निर्बाध रूप से लिखते रहे। देश में ऐसे समाचार पत्रों की बड़ी तादाद है, जिन्होंने आजादी की लौ को जलाए रखा। क्रांतिकारियों का न केवल समर्थन किया बल्कि उन्हें यथाशक्ति प्रकाशित भी किया। कुछ को उनके नाम से और कुछ को छद्म नाम से। वैसे आजादी की लड़ाई में देश के हर आम और खास का सहयोग रहा है। सभी जाति, धर्म के लोगों ने आजादी की लड़ाई लड़ी और देश को ब्रिटिश हुकूमत की दासता से मुक्त कराने का भरसक प्रयास किया। आज देश आजाद है और अपने हिसाब से दिन-रात एक कर प्रगति के आसमान छू रहा है। आत्मनिर्भर और विकसित भारत के निर्माण की दिशा में तेजी से अपने पैर बढ़ा रहा है। आज देशवासी अगर आजादी की खुली हवा में सांस ले पा रहे हैं तो इसमें देश के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले क्रांतिकारियों और अंग्रेजों की यातना सहने वाले पत्रकारों और साहित्यकारों का बड़ा योगदान है। उत्तर प्रदेश मासिक को ओर से हम देश की आजादी के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले क्रांतिवीरों को नमन करते हैं। शहीदों को विनम्र श्रद्धांजलि प्रदान करते हैं। देश की आजादी सलामत रहे, वह इसी तरह दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की करता रहे, यही हमारी अभिलाषा है। तिरंगा निरंतर इसी आन-बान-सम्मान से भारतीय क्षितिज पर लहराता रहे, इस दिशा में हर भारतवासी की निरंतर सजग, सतर्क रहना हांगा। सावधानी ही आजादी का सबसे बड़ा मंत्र है। बिना इसके बात बनती रही। काश, हम आजादी के महत्व को समझ पाते।

मौजूदा युवा पीढ़ी प्रश्नाकुल है। सवाल पूछती और उसके जवाब चाहती है। परिवर्तनकामी होने के नाते पुरातन ढांचे को चुनौती देने का साहस करती है और शायद यही उसकी सबसे बड़ी ताकत भी है। कितना अच्छा होता कि उस ऊर्जा को संवेदनशीलता, विवेक और राष्ट्रहित की भावना से जोड़ने के प्रयास होते, तो यही पीढ़ी भारत के भविष्य की सबसे मजबूत नींव बनती। 80वें स्वतंत्रता दिवस पर एक जरूरी सवाल जो अपने दिलोंदिमाग में है कि क्या हम केवल आजाद भारत के नागरिक हैं या अपनी आजादी के महत्व को समझने वाले जिम्मेदार नागरिक भी हैं। बेखौफ बोलना ही स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि असल स्वतंत्रता तो ऐसी आवाज बनने में है जो समाज को जोड़े, आगे बढ़ाए और भावी पीढ़ियों के लिए एक बेहतर, विकसित और आदर्श भारत का सपना साकार करें।

वंदे मातरम् और राष्ट्रीय साहित्य चेतना

□ प्रो. गौरी त्रिपाठी



वंदे मातरम् और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना का अंतर संबंध बहुत समृद्ध रहा है। भारतवर्ष का कोई भी नागरिक होश संभालते ही अपने स्कूल की प्रार्थना सभा में वंदे मातरम् गाता है और यह गीत उसके मन में जीवन पर्यंत राष्ट्रीय चेतना का बीज डाल देते हैं। एक तरह से यह गीत स्वाधीनता आंदोलन का प्रयाण गीत था जिसने पूरे हिंदुस्तानियों के मन में स्वाधीनता आंदोलन और स्वतंत्रता के उत्साह को भर दिया। कुछ रचनाएं, रचनाकार अपने समय के बहुत महत्वपूर्ण हस्ताक्षर होते हैं। वैसे भी समाज में साहित्य का स्थान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। कितना भी कठिन समय क्यों न रहा हो, साहित्य ने, रचनाकारों ने, कवियों ने इस समाज को रास्ता दिखाया है। स्वतंत्रता आंदोलन का समय भारतीय नागरिकों के लिए एक कठिन समय रहा था, जब उन्हें कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता था। ऐसे में कई रचनाकारों के गीतों ने हम में फिर से उत्साह का रंग भर दिया था। हमारा समय कितना भी कठिन क्यों हो रहा हो रचनाकारों ने उसे अपने तरीके से आसान बनाने की हर संभव कोशिश की थी। उदाहरण के लिए बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय का यह महत्वपूर्ण गीत



वंदे मातरम्

सुजलाम सुफलाम मलयज शीतलाम

शस्य श्यामलम मातरम्

वंदे मातरम्। आज 150 वर्ष पूर्ण कर चुका है लेकिन इस गीत की महत्ता, प्रासंगिकता निरंतर बढ़ती ही जा रही है। यह ऐसा गीत है जिसको गाते समय हम पूरे भारतवासी एक मन हो जाते हैं। वह साहित्यकार कितना महान रहा है जिसने एक गीत के सहारे पूरे भारतवर्ष के नागरिकों को एक सूत्र में बांध दिया हो। हालांकि उस समय भी समाज कई स्तरों पर विभाजित था। ऐसे समय में इस गीत ने पूरे समाज को एक ही भावना में जोड़ा। कितनी आश्चर्य और सुखद बात है कि आज भी यह गीत भारत की सभी भाषाओं में, सभी समुदायों में एक साथ सहज ही स्वीकार्य है। इसलिए यह गीत अपनी स्वाभाविकता में ही राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक तत्वों का एक अद्भुत उदाहरण बन गया।

कभी-कभी रचनाकारों की एक ही कृति बेहद महत्वपूर्ण हो जाती है इसी क्रम में बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय की एक कालजयी कृति आनंद मठ रही है जिसके अंतर्गत पहली बार हम सब

ने मातृभूमि के प्रति सर्वश्रेष्ठ निष्ठावर करने के महत्वपूर्ण जज्बे को सुना था। यह वह दौर था जब बंगाल का विभाजन चल रहा था इसी दौरान वंदे मातरम महज गीत ही नहीं रहा बल्कि प्रतिरोध और उत्साह जगाने का एक बड़ा माध्यम बन गया। इस कृति ने सीधे-सीधे भारतवर्ष के सभी नागरिकों से अपना संबंध जाड़ लिया। वंदे मातरम सिर्फ बंगाल का या किसी खास भाषा तक सीमित नहीं रहा बल्कि इस गीत ने पूरे देश को अपने में समा लिया। इस गीत के साथ ही पूरा देश राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन के संग्राम में उठ खड़ा हुआ था। साहित्यकारों ने भी अपने-अपने तरीके से यह युद्ध लड़ा, इसकी तैयारी की।

वंदे मातरम के ही समानांतर पूरे देश में स्वाधीनता आंदोलन का साहित्य लिखा जाने लगा था। सुब्रमण्यम भारती के साथ-साथ माखनलाल चतुर्वेदी, रविंद्र नाथ टैगोर, मैथिली शरण गुप्त ऐसे अनेक नाम हैं जो एक साथ देशभक्ति की रचनाएं लिख रहे थे। इसके साथ ही स्वतंत्रता आंदोलन में सीधे तौर पर हिस्सा ले रहे थे।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय का हिंदी साहित्य बहुत समृद्ध रहा है।

हिंदी साहित्य में खासतौर पर कविता में यह कालखंड छायावादी कविता के नाम से जाना जाता है। छायावादी कविता कल्पना प्रतीक और प्रकृति की कविता के साथ-साथ राष्ट्रीय सांस्कृतिक आंदोलन की भी कविता थी। बहुत सारे आलोचकों ने राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति कहा है। वह पूरा कालखंड ही जैसे जागरण का काव्य था।

जागो फिर एक बार सिंह की मांद में आज आया है एक स्यार.....'

माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन और सुभद्रा कुमारी चौहान जैसी रचनाकारों ने इसी वंदे मातरम के दर्शन का अपनी कविताओं में और ज्यादा स्थापित और प्रसारित किया।

आज वंदे मातरम की 150वीं वर्षगांठ मनाई जा रही है। यह उपन्यास आनंद मठ उपन्यास 1869 और 73 के कालखंड में बंगाल के सन्यासी विद्रोह पर आधारित था जिसके अंतर्गत राष्ट्रवादी चेतना का उदय होता है 1896 में कालकाता अधिवेशन में रविंद्र नाथ टैगोर सर्वप्रथम इस गीत

को गाते हैं और इस गीत को राष्ट्रीय पहचान मिलती है। यह अद्भुत राष्ट्रीय गीत है। यह गीत हमें राष्ट्र प्रेम की भावना से भर देता है।

मनुष्य की तमाम संवेदनाओं के बीच राष्ट्रीय चेतना भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अंततः हम समाज के ही होते हैं और समाज लगभग हर राष्ट्र को उसमें रहने वाले हर मनुष्य को प्रभावित करता है। इसे ही हम राष्ट्रीय चेतना कहते हैं, हम कहीं भी रहें, अपने राष्ट्र के नाम पर हम एकजुट हो जाते हैं। यह राष्ट्रीय चेतना राष्ट्र की पहचान और उसकी मर्यादा से जुड़ी हुई होती है। राष्ट्रवादी रचनाकारों के अंतर्गत हम बहुत सारे रचनाकारों को ले सकते हैं जो सीधे-सीधे राष्ट्रीय चेतना से जुड़ते हैं और अपनी रचनाओं में भी राष्ट्रीय चेतना का चित्रांकन करते हैं। मैथिली शरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर, इकबाल और रविंद्र नाथ टैगोर भारतीय भाषाओं में बहुत सारे नाम हैं जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना पर काम किया और अपनी रचनाओं में राष्ट्र प्रेम को सर्वोपरि रखते गए।

आजादी के आंदोलन में तथा राष्ट्रीय चेतना की भूमिका में सभी भारतीय भाषाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। हिंदी साहित्य की अगर बात करें तो यह स्वतंत्रता आंदोलन में बहुत मुखर और रचनात्मक रहा है अगर हिंदी कविता में माखनलाल चतुर्वेदी और सुभद्रा कुमारी चौहान की कविताएं ओजस्वी राष्ट्र प्रेम की कविताएं हैं तो दक्षिण से सुब्रमण्यम भारती की कविताएं भी देश प्रेम के ही गीत गाती हैं।

स्वाधीनता आंदोलन के समय हिंदी कविता अपने स्वाधीनता प्रेम का लेकर काफी सक्रिय हो उठी थी। कविताएं केवल प्रेम और सौंदर्य पर ही नहीं लिखी जाती थीं बल्कि जीवन के जिस भी क्षेत्र में पराधीनता और असमानता दिखाई पड़ती थी, कविता उस स्पर्श करती थी। राष्ट्रीय जागरण का देशव्यापी प्रभाव स्वाधीनता आंदोलन और कविता के संदर्भ में हम समझ सकते हैं। जाहिर सी बात है कविता सीधे-सीधे तो नहीं लेकिन स्पष्ट और अमूर्त तरीके से स्वाधीनता आंदोलन की कहानी कहने लगी थी, वैसे भी कविता की सार्थकता रोजनामचा हाने में तो है नहीं, जो सीधे-सीधे किसी बात को लिखें। कविता एक संवेदनात्मक प्रतिक्रिया के तौर पर घटित होती है फिर वह किसी देशकाल परिस्थिति की क्या न हो।

वैसे तो भारत का प्रथम स्वाधीनता आंदोलन 1857 वाले विद्रोह को माना जाता है लेकिन तब तक वह आम जनमानस का आंदोलन नहीं था। लगभग तीन दशक बाद जब 1885 में पहली बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन हो जाता है और उसके मंचों से आजादी की तो नहीं, लेकिन भारतीयों के लिए सुविधाओं की मांग उठनी शुरू होन लगती है।

अंग्रेजी राज्य में भारत की दुर्दशा और आजादी की बात राजनीतिक मंचों से भी पहले "भारत भारती" नामक अपने काव्य में पहली बार बहुत व्यवस्थित ढंग से द्विवेदी युग के कवि श्री मैथिली शरण गुप्त ने उठाया—

**"हम कौन थे क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी?
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएं सभी।**

भूलाक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहा?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहां।

संपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है?

उसका कि जो ऋषि भूमि है वह कौन? भारतवर्ष है।
भारतवर्ष ही संसार का सिरमौर है,

ऐसा पुरातन देश कोई विश्व में क्या और है?

**भगवान की भव भूतियों का यह प्रथम भंडार है
विधि ने किया नर सृष्टि का पहले यहीं विस्तार है**

हिंदी का प्रथम राष्ट्रीय कवि हम मैथिली शरण गुप्त को मानते हैं उनकी प्रसिद्ध देशभक्तिपूर्ण रचना "भारत भारती" को यह गौरव प्राप्त था स्वयं महात्मा गांधी उन्हें राष्ट्रकवि की पदवी प्रदान करते हैं। हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना की एक लंबी परंपरा रही है जिसके अंतर्गत आदिकालीन कविता से लेकर आधुनिक काल और अब तक राष्ट्रकवि अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते चले आ रहे हैं।

अपनी मातृभूमि के प्रति हर व्यक्ति को लगाव होता है। जन्म भूमि का स्वर्ग से भी बड़ा दर्जा दिया गया है। स्वाधीनता संग्राम के दौरान बंदे मातरम हमारे लिए प्रेरणा स्रोत बना और महत्वपूर्ण रूप में राष्ट्रीय जागरण का एक मूल मंत्र रहा है।

नीलांबर प्रधान हरित तट पर सुंदर है
सूर्य चंद्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है।

नदियां प्रेम प्रवाह फूल तारे मंडन हैं
बंदीजन खग वृन्द शेष फन सिंहासन है।^१

हिंदी साहित्य में माखनलाल चतुर्वेदी एक ऐसा नाम है जिनको "भारतीय आत्मा" के नाम से जाना जाता था। वे हिंदी साहित्य के एक प्रमुख राष्ट्रीय कवि और पत्रकार भी थे, उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से भागीदारी की और भारतीय जनमानस में स्वतंत्रता की भावना को बहुत मजबूत किया। हिंदी की राष्ट्रीय चेतना माखनलाल चतुर्वेदी की कविताओं से बहुत समृद्ध हो जाती है। हिमतरंगिणी हिम किरीटिनी जैसी कृतियों में उन्होंने ओज और माधुर्य की कविताओं को प्रस्तुत किया है जिसको सुनकर वीरता का संचार होता है।

"पुष्प की अभिलाषा" माखनलाल चतुर्वेदी जी की अमर रचना है। इस कविता को माखनलाल चतुर्वेदी जी ने बिलासपुर सेंट्रल जेल में लिखा था जिससे हम आज ही प्रेरणा लेते हैं।

**चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूथा जाऊं
चाह नहीं प्रेमी माला में विध प्यारी को ललचाऊं**

माखनलाल चतुर्वेदी अपने मिजाज में पत्रकार और सच्चे अर्थों में देशभक्त और रचनाकार थे। "अमर राष्ट्र" नामक कविता, में वे स्वतंत्रता पाने की बात करते हैं, स्वतंत्रता कैसे मिलेगी, इसकी प्रक्रिया में वे अपने बाहुबल पर ज्यादा भरोसा करते हैं।

ऐसा करते हुए बहुत आक्रामक भी हो जाते हैं।

**यह जागृत तेरी तू ले ले, मुझको मेरा दे दे सपना।
तेरे सिंह शीतल सिंहासन से सुखकर सौ युग ज्वाला तपना।
सूली का पथ ही सीखा हूँ, सुविधा सदा बचाता आया।
मैं बलि पथ का अंगारा हूँ, जीवन ज्वाल जलाता आया।**

सुभद्रा कुमारी चौहान भी राष्ट्रीय आंदोलन से सीधे तौर पर जुड़ी थीं! साथ ही अपनी रचनाओं में तो वह राष्ट्र प्रेम को ही प्रमुख स्थान देती थीं। उनकी प्रसिद्ध कविता झांसी की रानी है जिस सुनकर आज भी हमारे अंदर जोश उत्पन्न हो जाता है।

**सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भूकुटी तानी थी
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी
गुमी हुई आजादी की कीमत सब ने पहचानी थी
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी
चमक उठी सन 57 में वह तलवार पुरानी थी
बुंदेले हरबोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।^२**

वैसे तो हिंदी साहित्य स्वाधीनता आंदोलन के समय में पूरी तरह से ओतप्रोत था लेकिन कविताओं में सबसे मुखर अभिव्यक्ति हुई है। सुमित्रानंदन पंत प्रकृति क सुकुमार कवि मान जाते हैं वे भी प्रकृति प्रेम के साथ-साथ स्वतंत्रता आंदोलन और भारत माता पर कविता लिखते हैं। भारत माता कविता में वह केवल भारत माता की गाथा नहीं गाते हैं बल्कि पूरे भारतवर्ष का चित्र खींचते हैं उन्हें सभी भारतवासियों की चिंता है

**भारत माता
ग्राम वासिनी।।
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला सा आंचल
गंगा यमुना में आंसू जल
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी।'**

प्रसाद जी ने अपनी कविताओं के साथ-साथ अपने नाटकों में भी राष्ट्रीय चेतना का संदेश दिया है चाहे अरुण यह मधुमय देश हमारा जैसी कविता हो या प्रबुद्ध शुद्ध भारती जैसा प्राण गीत हो हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय कविताओं में पराधीनता से लड़ने के उपाय बताए गए हैं तथा पराधीनता को बहुत ही खराब बताया गया है और हमारे हिंदी कवियों ने अपने अतीत का गौरवपूर्ण गान भी किया है वह सिर्फ इसलिए कि हमें वर्तमान में उसे सहायता मिल सके, शोषण-अन्याय व अंग्रेजी शासन के प्रति विद्रोह क्रांति की जीत सभी हिंदी प्रस्तुत हुई हैं। हम कह सकते हैं कि राष्ट्रीय आंदोलन में जहां लाखों योद्धाओं ने अपन प्राणों को न्यौछावर कर दिया वही हिंदी साहित्य के कवि भी इसमें पीछे नहीं थे। उन्होंने अपनी कलम से भी राष्ट्रीय आंदोलन की लड़ाई लड़ी।

स्वाधीनता आंदोलन केवल कविता तक ही सीमित नहीं था बल्कि गद्य और नाटक में भी स्वाधीन चेतना के अध्याय लिखे जा रहे थे। जयशंकर प्रसाद कविता में अगर उषा सुनहले तीर बरसाती जय लक्ष्मी सी उदित हुई उधर पराजित कालरात्रि भी जल में अंतर्निहित हुई वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का आज लगा हंसते फिर से वर्षा बीती हुआ सृष्टि में शरद विकास नए सिर से

अगर हम थोड़ा ठहर करके इन कविताओं को पढ़ें तो लगता है जैसे आजादी के बाद मिलने वाली प्रातः कालीन स्वतंत्रता का वर्णन है। कवि और लेखक अपनी रचनाओं में अगर आजादी के संघर्ष को लिखते हैं तो आजादी के बाद मिलने वाली सुनहरी सुबह की भी दास्तान लिखते हैं।

प्रसाद जी ने अपन नाटकों में देशभक्ति के उच्चतम स्वरूप दिखाए हैं। कथा सम्राट प्रेमचंद सोजें वतन जैसी रचना लिखते हैं जिसे अंग्रेजी सरकार द्वारा प्रतिबंधित और जब्त कर लिया जाता है। रचनाकार हमेशा अपने समय की आवाज को अपनी रचनाओं में चित्रित करते हैं।

रामधारी सिंह दिनकर की कविताएं भी राष्ट्रीय चेतना में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, उन्होंने अपनी ओजस्विता से हिंदी कविता को बहुत समृद्ध किया है।

**जनता की रोके राह समय में ताव कहां
वह जिधर चाहती काल उधर ही मुड़ता है
दो राह समय के रथ का घर-घर जनता आती है
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है***

दिनकर भी वही गीत गाते हैं जो बंकिम चंद्र गाते हैं, दोनों के स्वर, तरीक, भाषा अलग हो सकती है लेकिन यह सभी रचनाकार भारत माता के ही कल्याण में अपने जीवन को उत्सर्ग भी कर रहे हैं।

राष्ट्रीय चेतना में स्वराज या एक बड़ा शब्द बनकर उभरा था। स्वराज की कामना हर देशभक्त का पहला सपना था। कौमी तराना से लेकर राष्ट्रगीत लिखे जा रहे थे। श्रीधर पाठक ने भी हिंद वंदना के नाम से एक कौमी तराना लिखा था जो प्रभात फेरी में भी गाया जाता था। रचनाकारों की लेखनी ने वाकई प्रबल संबल प्रदान किया। कई ऐसे भी रचनाकार थे जिनकी रचनाओं पर प्रतिबंध भी लगा और उन रचनाकारों को भी कैद कर लिया गया लेकिन फिर भी हिंदी की राष्ट्रीय चेतना आगे बढ़ती ही गई। सोहनलाल द्विवेदी की कविताओं में भी राष्ट्रीय चेतना का स्वर बहुत प्रबल दिखाई पड़ता है जिसे सुनकर अपना सर्वस्व समर्पण करने की होड़ सी मच जाती है।

**वंदना के इन स्वरों में एक स्वर मेरा मिला लो
बंदिनी मां को न भूलो राग में जब मत्त झूलो
अर्चना के रत्न कण में एक कण मेरा मिला लो
जब हृदय का तार बोले शृंखला के बंद खोलो
हो जहां बलि शीश अगणित एक सिर मेरा मिला लो***

लगभग हर कालखंड में देश भक्ति की स्वाधीन चेतना एक गहरे मूल्य के तौर पर विद्यमान रही है। हिंदी साहित्य के प्रारंभिक कालखंड का साहित्य जिसे वीरगाथा काल या चारण युग भी कहा जाता है, वहां भी राष्ट्रीय चेतना के तत्व दिखाई पड़ते हैं। भक्ति कालीन कविता जिस हम सिर्फ भक्ति तक सीमित कर दत हैं उस कालखंड में भी भक्त कवियों ने स्वाधीन होने पर मनुष्य होने पर ज्यादा जोर दिया है। वहां तो मानुष प्रेम को अत्यधिक महत्व दिया गया और यह मानव प्रेम कहीं न कहीं राष्ट्र की, व्यक्ति की स्वाधीन चेतना से जुड़ा हुआ मामला प्रतीत होता है। रसखान को तो मैं मध्यकाल का पहला राष्ट्र प्रेमी कवि मानती हूं जो सिर्फ और सिर्फ भारत भूमि में ही जन्म लेना चाहता है। उसे कुछ और की चाहत नहीं है। वह किसी भी रूप में यहां तक कि पशु, पक्षी या पत्थर के रूप में भी भारतवर्ष अपनी जन्म भूमि को दोबारा पाना चाहता है। सच्चे अर्थों में यह स्वाधीन चेतना या राष्ट्र प्रेम की चेतना की कविता कहलाएगी।

भारतेंदु युग को घोषित तौर पर आधुनिकता का प्रवेश द्वार कहा जाता है। जहां प्रिय प्रवास से शुरू होकर आधुनिक कविताएं राष्ट्रीय चेतना का स्वर लेकर आगे बढ़ जाती हैं। छायावादी कविता को हम राष्ट्रीय चेतना का स्वर्ण काल भी कह सकते हैं। इस युग में सभी कवि अगर मनुष्य की मुक्ति की कामना कर रहे थे तो हम अंग्रेजों से भी मुक्ति की कामना कर रहे थे। निराला लिखते हैं

गहन है यह अंधकारा

स्वार्थ के अवगुंठनों से हुआ है लुंठन हमारा।।¹⁰

वैसे भी साहित्य किसी भी समाज को देखने का बेहद प्रामाणिक दस्तावेज है। इस आधार पर हिंदी साहित्य का स्वाधीनता आंदोलन विषयक लेखन बहुत खरा उतरता है। हिंदी साहित्य की राष्ट्र चेतना कविताओं में बहुत मुखर होकर दिखाई पड़ती है लेकिन हिंदी का गद्य साहित्य भी राष्ट्र प्रेम से भरा हुआ है। अगर आधुनिक काल में हम बात करें तो भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर नरेंद्र कोहली तक की यात्रा राष्ट्र प्रेम से भरी पड़ी हुई है। साहित्यकारों के जीवन में राष्ट्र प्रेम का बहुत महत्व होता है। वे समय-समय पर अपनी रचनाओं में लिखकर प्रमाणित भी करते रहते हैं। राष्ट्रीय चेतना जो आजादी के समय में एक अलग संवेदना के साथ

थी। उन संवेदनाओं के स्वरूप आने वाले साहित्य में परिवर्तित नजर आते हैं लेकिन मातृभूमि, राष्ट्र संस्कृति के प्रति ता रचनाकार हमेशा ही सजग रहते हैं।

वंदे मातरम और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना का मूल रंग एक ही है। दोनों जगह राष्ट्रीयता का ही संदर्भ मुख्य है। राष्ट्रीय चेतना या स्वाधीन चेतना जरूरी नहीं कि किसी एक पंक्ति में या किसी एक नारे में दिखाई पड़े। देखना यह होता है कि उस समाज के मूल साहित्य में राष्ट्रीय चेतना कहां तक व्याप्त है। इस आधार पर अगर देख तो वंदे मातरम कविता निश्चित तौर पर बड़े फलक तक जाती है। आज भी वंदे मातरम गीत हमारे लिए एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। दुनिया का कोई भी साहित्य हमें चेतना संपन्न बनाता है फिर वह स्वाधीन राष्ट्रीय चेतना ही क्यों न हो। हिंदी साहित्य का संसार अपनी राष्ट्रीय चेतना को स्थापित करने में मूर्त और अमूर्त रूप से बहुत सफल रहा है। आज के वर्तमान समय में वंदे मातरम और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना को एक साथ स्मरण करना अपने आप में एक गौरवपूर्ण संवेदना है। हमारा साहित्य आने वाले दिनों में इन गीतों की राष्ट्रीय चेतना से समृद्ध होता रहेगा।

संदर्भ सूची

1. रामविलास शर्मा, रागविराग, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
2. मैथिली शरण गुप्त, भारत भारती
3. मैथिलीशरण गुप्त, मातृभूमि
4. माखनलाल चतुर्वेदी, पुष्प की अभिलाषा
5. अमर राष्ट्र, माखन लाल चतुर्वेदी, संपादित पुस्तक, कविता समय संपादक, गौरी त्रिपाठी
6. झांसी की रानी, सुभद्रा कुमारी चौहान ग्रंथावली पृष्ठ संख्या 81
7. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, आशा सर्ग
8. सिंहासन खाली करो कि जनता आती है, रामधारी सिंह दिनकर, कविता कोष
9. सोहनलाल द्विवेदी, चर्चित राष्ट्रगीत भाग 2 संपादक नरेश चंद्र चतुर्वेदी
10. रामविलास शर्मा, राग विराग, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

पता : गुरु घासीदास केंद्रीय विश्वविद्यालय,
बिलासपुर, छत्तीसगढ़-495001
मो. : 9452206059

आत्मा का उत्सव है स्वतंत्रता दिवस

□ अमल मिश्र



भारतवर्ष के लिए पंद्रह अगस्त केवल एक राष्ट्रीय पर्व नहीं है, यह भारत की आत्मा का उत्सव है। यह वह दिन है जब पराधीनता की लंबी और पीड़ादायक रात्रि के पश्चात स्वतंत्रता का सूर्य उदित हुआ। यह दिवस उन असंख्य ज्ञात-अज्ञात बलिदानियों के त्याग, तप, साहस और संकल्प का स्मरण कराता है जिन्होंने अपने वर्तमान का उत्सर्ग कर हमारे भविष्य को स्वतंत्र बनाया। किंतु स्वतंत्रता केवल राजनीतिक सत्ता परिवर्तन का नाम नहीं है। उसका वास्तविक अर्थ है आत्मनिर्भरता, आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और आत्मविकास। यदि स्वतंत्रता मनुष्य को अपनी नियति स्वयं गढ़ने का अवसर प्रदान करती है, तो राष्ट्र के लिए वह निरंतर प्रगति, सृजन और विश्वकल्याण की दिशा में अग्रसर होने का दायित्व भी निर्धारित करती है। भारत ने 1947 से लेकर आज तक की यात्रा में अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं। विभाजन की त्रासदी, आर्थिक संसाधनों का अभाव, खाद्यान्न संकट, सीमित औद्योगिक आधार और निरक्षरता जैसी चुनौतियों से जूझते हुए इस राष्ट्र ने लोकतंत्र की जड़ों को सुदृढ़ किया, विज्ञान और प्रौद्योगिकी में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ अर्जित कीं, कृषि को आत्मनिर्भर बनाया, अंतरिक्ष में अपनी पहचान स्थापित की तथा विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में स्थान प्राप्त किया। आज स्वतंत्रता का अर्थ केवल स्वतंत्र रहना नहीं, अपितु वैश्विक नेतृत्व की क्षमता विकसित करना भी है।



भारत के विकास की यात्रा का सबसे प्रेरणादायक पक्ष यह है कि उसने विविधताओं के मध्य एकता को बनाए रखते हुए प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया। यहाँ अनेक भाषाएँ, धर्म, संस्कृतियाँ और जीवन-पद्धतियाँ हैं, फिर भी राष्ट्र की मूल चेतना एक है। यही सांस्कृतिक शक्ति भारत की सबसे बड़ी पूँजी है। विश्व में बहुत कम ऐसे देश हैं जिन्होंने हजारों वर्षों की सम्यता, लोकतांत्रिक परंपरा और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि का इतना संतुलित समन्वय स्थापित किया है। 21वीं शताब्दी का भारत केवल इतिहास की गौरवगाथाओं पर गर्व करने वाला राष्ट्र नहीं है, बल्कि भविष्य का निर्माण करने वाला राष्ट्र बन चुका है। विकसित भारत 2047 की परिकल्पना इसी आत्मविश्वास की अभिव्यक्ति है। स्वतंत्रता के शताब्दी वर्ष तक ऐसा भारत निर्मित करने का लक्ष्य है जो आर्थिक दृष्टि से समृद्ध, तकनीकी रूप से अग्रणी,

सामाजिक रूप से समावेशी, पर्यावरण की दृष्टि से संतुलित तथा सांस्कृतिक रूप से आत्मगौरव से परिपूर्ण हो।

देखें तो विकसित भारत का विचार कवल सकल घरलू उत्पाद की वृद्धि तक सीमित नहीं है। इसका अर्थ है ऐसा समाज जहाँ प्रत्येक नागरिक को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, उत्कृष्ट स्वास्थ्य सेवाएँ, सुरक्षित जीवन, सम्मानजनक रोजगार और समान अवसर उपलब्ध हों। यह वह भारत होगा जहाँ विकास महानगरों तक सीमित न रहकर गाँवाँ, सीमांत क्षेत्रों और जनजातीय अंचलों तक समान रूप से पहुँचे। भारत की विकास यात्रा का सबसे महत्वपूर्ण आधार नवाचार है। ज्ञान—आधारित अर्थव्यवस्था में वही राष्ट्र आगे बढ़ते हैं जो अनुसंधान, विज्ञान और प्रौद्योगिकी में निरंतर निवेश करते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, क्वांटम कंप्यूटिंग, जैव प्रौद्योगिकी, रोबोटिक्स, अर्धचालक निर्माण, अंतरिक्ष अनुसंधान, साइबर सुरक्षा और डिजिटल प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में भारत तीव्र गति से अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। भारतीय युवाओं की रचनात्मक क्षमता विश्वभर में सम्मान प्राप्त कर रही है। स्टार्टअप संस्कृति ने लाखों युवाओं का राजगार खोजने वाले की न जाय रोजगार प्रदाता बनाया है।

डिजिटल भारत की अवधारणा ने शासन व्यवस्था में अभूतपूर्व परिवर्तन किया है। डिजिटल भुगतान प्रणाली, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण, ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल स्वास्थ्य सेवाएँ, ई-गवर्नेंस और डिजिटल पहचान जैसी व्यवस्थाओं ने प्रशासन को अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और जनसुलभ बनाया है। तकनीक का उद्देश्य केवल सुविधा उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि लोकतंत्र को अधिक प्रभावी बनाना भी है। विज्ञान और तकनीक के साथ-साथ भारत ने अंतरिक्ष अनुसंधान में भी विश्व का अपनी क्षमता का परिचय दिया है। सीमित संसाधनों के बावजूद भारतीय वैज्ञानिकों ने ऐसे मिशनों को सफल बनाया है जिनकी विश्वभर में प्रशंसा हुई। चंद्रमा और मंगल ग्रह तक पहुँचने की उपलब्धियाँ केवल वैज्ञानिक सफलताएँ नहीं हैं, वे राष्ट्रीय आत्मविश्वास और अनुसंधान संस्कृति की विजय हैं। अंतरिक्ष तकनीक आज कृषि, मौसम पूर्वानुमान, आपदा प्रबंधन, संचार और राष्ट्रीय सुरक्षा का लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

स्वतंत्र भारत की सबसे बड़ी उपलब्धियों में कृषि क्षेत्र का परिवर्तन भी सम्मिलित है। जिस देश को कभी खाद्यान्न आयात करना पड़ता था, वही आज विश्व का प्रमुख कृषि उत्पादक देशों में गिना जाता है। हरित क्रांति, श्वेत क्रांति,

नीली क्रांति तथा आधुनिक कृषि तकनीकों ने उत्पादन क्षमता को बढ़ाया है। अब आवश्यकता केवल उत्पादन बढ़ाने की नहीं, बल्कि कृषि को लाभकारी, टिकाऊ और जलवायु-अनुकूल बनाने की है। प्राकृतिक खेती, जैविक कृषि, सूक्ष्म सिंचाई, कृषि यंत्रीकरण, कृषि प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन तथा कृषि आधारित उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई दिशा प्रदान कर रहे हैं। किसान केवल अन्नदाता ही नहीं, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के आधारस्तंभ भी हैं। भारत के विकास का भविष्य पर्यावरणीय संतुलन से भी जुड़ा हुआ है। यदि विकास प्रकृति के विनाश पर आधारित होगा तो उसकी स्थिरता संदिग्ध होगी। इसलिए हरित विकास की अवधारणा आज वैश्विक आवश्यकता बन चुकी है। भारत ने नवीकरणीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, हरित हाइड्रोजन, विद्युत वाहनों तथा कार्बन उत्सर्जन में कमी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पहल की है। जल संरक्षण, जैव विविधता, वन संरक्षण और स्वच्छ ऊर्जा के माध्यम से आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित पर्यावरण का निर्माण राष्ट्रीय दायित्व है।

भारतीय संस्कृति सदैव प्रकृति को पूजनीय मानती रही है। नदियाँ, पर्वत, वृक्ष और वन केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, जीवन के आधार हैं। आधुनिक पर्यावरणीय चिंतन और भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि का यह अद्भुत सामंजस्य विश्व के लिए प्रणामोत्तम बन सकता है। विकसित भारत का अर्थ केवल ऊँची इमारतें नहीं, स्वच्छ नदियाँ, हरित वन, शुद्ध वायु और संतुलित पारिस्थितिकी भी है। राष्ट्रीय सुरक्षा किसी भी विकसित राष्ट्र की अनिवार्य शर्त होती है। भारत ने अपनी सैन्य शक्ति को आधुनिक तकनीक से सुसज्जित करने की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति की है। स्थल, जल और वायु सेनाओं के आधुनिकीकरण के साथ-साथ साइबर सुरक्षा, अंतरिक्ष सुरक्षा, ड्रोन तकनीक और स्वदेशी रक्षा उत्पादन पर विशेष बल दिया जा रहा है। आत्मनिर्भर रक्षा उद्योग न केवल राष्ट्रीय सुरक्षा को सुदृढ़ करता है, बल्कि आर्थिक विकास और तकनीकी अनुसंधान को भी गति प्रदान करता है। भारत की सेनाएँ केवल सीमाओं की रक्षा ही नहीं करतीं, वे प्राकृतिक आपदाओं, मानवीय संकटों और अंतरराष्ट्रीय शांति अभियानों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सैनिकों का अनुशासन, साहस और राष्ट्रनिष्ठा प्रत्येक नागरिक के लिए प्रेरणा का स्रोत है। स्वतंत्रता दिवस उन वीरों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का भी अवसर है जो अपने परिवारों से दूर रहकर राष्ट्र की सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं।

आर्थिक सुधारों ने भारत की विकास यात्रा को नई गति प्रदान की है। उदारीकरण, आधारभूत संरचना का विस्तार, विनिर्माण क्षेत्र का विकास, वित्तीय समावेशन, कर सुधार, डिजिटल अर्थव्यवस्था तथा उद्यमिता को प्रोत्साहन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को अधिक गतिशील बनाया है। सड़कों, रेलमार्गों, बंदरगाहों, हवाई अड्डों, औद्योगिक गलियारां और लॉजिस्टिक नटवर्क का विस्तार उत्पादन और व्यापार को नई ऊर्जा प्रदान कर रहा है। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवनरेखा हैं। हस्तशिल्प, वस्त्र उद्योग, खाद्य प्रसंस्करण, पारंपरिक कलाएँ और स्थानीय उत्पादन न केवल रोजगार प्रदान करते हैं, बल्कि भारत की सांस्कृतिक पहचान को भी सुदृढ़ करते हैं। स्थानीय उत्पादन का वैश्विक बाजार से जोड़ना विकसित भारत की आर्थिक रणनीति का महत्वपूर्ण अंग है। साथ ही भारत के अंतरराष्ट्रीय संबंधों में भी उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। आज भारत विश्व राजनीति में संतुलित, विश्वसनीय और उत्तरदायी शक्ति के रूप में देखा जाता है। अनेक देशों के साथ रणनीतिक साझेदारी, मुक्त व्यापार समझौते, ऊर्जा सहयोग, प्रौद्योगिकी साझेदारी तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने भारत की वैश्विक भूमिका को व्यापक बनाया है। वैश्विक दक्षिण की आवाज के रूप में भारत ने विकासशील देशों की आकांक्षाओं को प्रभावी मंच प्रदान किया है।

विश्व व्यापार के क्षेत्र में भारत की भूमिका निरंतर बढ़ रही है। सूचना प्रौद्योगिकी, औषधि निर्माण, इंजीनियरिंग उत्पाद, सेवा क्षेत्र, कृषि निर्यात तथा डिजिटल नवाचार ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक प्रतिस्पर्धा में सशक्त बनाया है। भारत आज केवल विशाल उपभोक्ता बाजार नहीं, विश्वसनीय उत्पादन केंद्र और नवाचार का उभरता हुआ वैश्विक केंद्र भी बन रहा है। इस व्यापक परिवर्तन की आधारशिला शिक्षा है। शिक्षा किसी भी राष्ट्र के भविष्य का निर्माण करती है। यदि स्वतंत्रता ने हमें राजनीतिक अधिकार प्रदान किए हैं, तो शिक्षा उन अधिकारों के विवकपूर्ण, उत्तरदायी और रचनात्मक उपयोग का संस्कार देती है। राष्ट्रीय शिक्षा व्यवस्था का उद्देश्य केवल रोजगार उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि ऐसे नागरिक तैयार करना है जो चरित्रवान, सृजनशील, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संपन्न, संवेदनशील, नैतिक तथा राष्ट्रहित के प्रति समर्पित हों। शिक्षा तभी सार्थक कही जाएगी जब वह व्यक्ति में जिज्ञासा, अनुसंधानशीलता, नवाचार की क्षमता तथा आजीवन सीखने की प्रवृत्ति का विकास करे।

इसी व्यापक दृष्टि को मूर्त रूप देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा व्यवस्था में एक युगांतकारी परिवर्तन का आधार प्रस्तुत करती है। यह नीति ज्ञान को केवल परीक्षा और प्रमाणपत्र तक सीमित न रखकर जीवनोपयोगी कौशल, सृजनात्मक चिंतन, अनुसंधान, नवाचार और बहुविषयी अध्ययन पर बल देती है। प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक समग्र, लचीली और छात्र-केंद्रित व्यवस्था विकसित करने का इसका उद्देश्य है। नवीन शैक्षिक संरचना बालकों की आयु और मनावैज्ञानिक विकास के अनुरूप अधिगम को व्यवस्थित करती है, जिससे सीखने की प्रक्रिया अधिक स्वाभाविक, आनंददायी और प्रभावी बन सके। यह नीति मातृभाषा तथा भारतीय भाषाओं में प्रारंभिक शिक्षा का प्रोत्साहित करत हुए विद्यार्थियों की बौद्धिक क्षमता और सांस्कृतिक आत्मविश्वास का सुदृढ़ करने का प्रयास करती है। साथ ही विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अभियांत्रिकी, गणित, मानविकी, सामाजिक विज्ञान, कला, संगीत तथा व्यावसायिक शिक्षा के मध्य कृत्रिम विभाजनों का समाप्त कर बहुविषयी शिक्षा की अवधारणा को बढ़ावा देती है। इसके माध्यम से विद्यार्थी अपनी रुचि और योग्यता के अनुरूप विविध विषयों का चयन कर समग्र व्यक्तित्व का विकास कर सकते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 अनुसंधान और नवाचार को राष्ट्रीय प्रगति का प्रमुख आधार मानती है। उच्च शिक्षण संस्थानों में अनुसंधान संस्कृति को प्रोत्साहित करने, उद्योग-जगत और विश्वविद्यालयों के मध्य सहयोग स्थापित करने, प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षण को बढ़ावा देने तथा उद्यमिता को शिक्षा से जोड़ने पर विशेष बल दिया गया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल प्रौद्योगिकी, कौशल विकास, नवाचार प्रयोगशालाओं और स्टार्टअप संस्कृति को शिक्षा से जोड़ने का उद्देश्य ऐसी युवा शक्ति तैयार करना है जो वैश्विक प्रतिस्पर्धा में भारत का नेतृत्व कर सके।

नई पीढ़ी को केवल सूचना से नहीं, ज्ञान, विवेक, नैतिकता और व्यावहारिक दक्षता से भी समृद्ध करना होगा। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों को अनुसंधान, प्रयोग, नवाचार, उद्यमिता तथा सामाजिक उत्तरदायित्व के जीवंत केंद्रों के रूप में विकसित करना समय की आवश्यकता है। भारतीय ज्ञान परंपरा, संविधान के मूल्यों, पर्यावरणीय चेतना, सांस्कृतिक विरासत तथा आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी का संतुलित समन्वय भविष्य की शिक्षा व्यवस्था को अधिक प्रभावी, समावेशी और वैश्विक बनाएगा। यही शिक्षा

विकसित भारत 2047 के निर्माण की सबसे सुदृढ़ आधारशिला सिद्ध होगी, क्योंकि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसकी प्राकृतिक संसाधनों से अधिक उसके शिक्षित, कुशल, सृजनशील और संस्कारित नागरिकों में निहित होती है। भारत का युवा वर्ग राष्ट्र की सबसे बड़ी जनसांख्यिकीय शक्ति है। यदि इस ऊर्जा को उचित दिशा, कौशल और अवसर प्राप्त हों तो विकसित भारत का लक्ष्य निर्धारित समय से पूर्व भी प्राप्त किया जा सकता है। कौशल विकास, तकनीकी प्रशिक्षण, अनुसंधान संस्कृति, खेल, कला, साहित्य और सामाजिक नेतृत्व जैसे क्षेत्रों में युवाओं की सक्रिय भागीदारी राष्ट्रीय विकास को व्यापक आधार प्रदान करगी। महिलाओं की सहभागिता के बिना विकसित भारत की कल्पना अधूरी है। शिक्षा, विज्ञान, प्रशासन, न्यायपालिका, रक्षा, खेल, उद्योग, राजनीति और उद्यमिता के प्रत्येक क्षेत्र में भारतीय महिलाओं ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। महिला सशक्तीकरण केवल सामाजिक न्याय का प्रश्न नहीं, बल्कि राष्ट्रीय प्रगति का अनिवार्य आधार है। जब समाज की आधी आबादी अपनी पूर्ण क्षमता के साथ राष्ट्रनिर्माण में सहभागी होगी, तभी विकास संतुलित और स्थायी होगा। भारत की सांस्कृतिक विरासत भी उसके विकास की महत्वपूर्ण शक्ति है। योग, आयुर्वेद, शास्त्रीय संगीत, नृत्य, साहित्य, दर्शन, लोककलाएँ, हस्तशिल्प और आध्यात्मिक परंपराएँ भारत की वैश्विक पहचान को समृद्ध करती हैं। सांस्कृतिक आत्मविश्वास किसी भी राष्ट्र का मानसिक रूप से सशक्त बनाता है। आधुनिकता का अर्थ अपनी जड़ों से विमुख होना नहीं, बल्कि उन्हें नए संदर्भों में जीवंत बनाए रखना है।

स्वतंत्रता दिवस प्रति वर्ष हमें यह स्मरण कराता है कि राष्ट्र का निर्माण केवल सरकारों से नहीं होता। प्रत्येक

नागरिक उसकी आधारशिला होता है। ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, कर भुगतान, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक सद्भाव, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा, संविधान के प्रति सम्मान तथा लोकतांत्रिक मूल्यों का पालन प्रत्येक नागरिक की जिम्मेदारी है। जब नागरिक अपने अधिकारों के साथ

अपने कर्तव्यों का भी समान निष्ठा से पालन करते हैं, तभी लोकतंत्र सशक्त होता है। 2047 का विकसित भारत केवल आर्थिक महाशक्ति बनने का स्वप्न नहीं देखता, वह मानवता के कल्याण में योगदान देने वाला ज्ञान, संस्कृति, विज्ञान और शांति का वैश्विक केंद्र बनने की आकांक्षा रखता है। यह ऐसा भारत होगा, जहाँ नवाचार और नैतिकता, विकास और पर्यावरण, परंपरा और आधुनिकता, शक्ति और शांति, समृद्धि और संवेदना एक-दूसरे के पूरक होंगे। पन्द्रह अगस्त हमें अतीत के गौरव, वर्तमान की जिम्मेदारियों और भविष्य की संभावनाओं के मध्य समन्वय का अनुभव कराता है। स्वतंत्रता सेनानियों ने हमें स्वतंत्र भारत दिया। विकसित भारत का निर्माण हमारी पीढ़ी का दायित्व है। यदि प्रत्येक भारतीय अपने कार्यक्षेत्र में उत्कृष्टता, अनुशासन, ईमानदारी और राष्ट्रहित को सर्वोच्च स्थान दे, तो स्वतंत्रता की शताब्दी तक भारत केवल विकसित राष्ट्र ही नहीं, मानव सभ्यता के लिए आशा, सहयोग, शांति और सतत विकास का अग्रदूत बनकर विश्व पटल पर प्रतिष्ठित होगा। यही स्वतंत्रता दिवस की सच्ची सार्थकता है, यही देश के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने वालों के प्रति हमारी सर्वोत्तम श्रद्धांजलि

होगी और यही विकसित भारत 2047 का वास्तविक संकल्प भी है। •

पता : सी-361 राजाजीपुरम, लखनऊ-226 017
मो. : 99568 99939

1857 का विद्रोह

□ राज गोपाल सिंह वर्मा



1857 को लंबे समय तक दो परस्पर विरोधी नामों में बाँधकर देखा गया है। औपनिवेशिक लेखन ने उसे प्रायः "सिपाही विद्रोह" या "म्यूटिनी" कहा, जबकि भारतीय राष्ट्रवादी स्मृति ने उसे "प्रथम स्वतंत्रता संग्राम" का स्थान दिया। दोनों पदों के पीछे अपनी-अपनी ऐतिहासिक राजनीति है। किंतु 1857 की पूरी अर्थवत्ता इन नामों के विवाद से अधिक



व्यापक है। वह केवल मेरठ, दिल्ली, कानपुर, लखनऊ और झाँसी की घटनाओं की शृंखला नहीं था। उसने लंदन की संसद, बकिंगहम पैलेस, यूरोपीय समाचारपत्रों, आयरिश सार्वजनिक जीवन, अमेरिकी प्रेस, रूसी रणनीतिक हलकों, मिशनरी संस्थाओं और एशियाई जगत में ब्रिटिश साम्राज्य की छवि को झकझोर दिया। इसलिए 1857 को समझने के लिए उसे भारत के भीतर घटित बहुस्तरीय विद्रोह और विश्वभर में फैले सूचना, भय, नैतिकता तथा सामाज्य के विमर्श, दोनों के रूप में पढ़ना होगा।

इस वैश्विक परिदृश्य की शुरुआत भारत में संचित असंतोष से होती है। नई एनफील्ड राइफल के कारतूसों ने सैनिकों की धार्मिक आशंकाओं को विस्फोटक रूप दिया, पर वे अकेले कारण नहीं थे। अवध का विलय, उत्तराधिकार और राज्य-विलय की नीतियाँ, भूमिसंबंधी व्यवस्थाओं में परिवर्तन, पारंपरिक अभिजात्य वर्ग का अवमूल्यन, सैन्य सेवा की शर्तें और सामाजिक-धार्मिक हस्तक्षेप की आशंकाएँ, ये सब अलग-अलग प्रदेशों और समुदायों में भिन्न अर्थों के साथ मौजूद थीं। कारतूस तत्काल चिंगारी थे, किंतु असंतोष की सामग्री पहले से फैली हुई थी। इसीलिए इसे केवल सैन्य अनुशासन-भंग मान लेना उतना ही अपर्याप्त है, जितना इसे बिना भेद किए एक सर्वभारतीय राष्ट्रीय क्रांति घोषित कर देना। विद्रोह का भूगोल, नेतृत्व, सामाजिक आधार और उद्देश्य एकरूप नहीं थे, फिर भी अनेक स्थानीय शिकायतें एक ऐसे शासन के विरुद्ध जुड़ गईं जिसे लोग अपने जीवन और संस्थाओं को बदल देने वाली शक्ति के रूप में देखने लगे थे।

जब मेरठ और दिल्ली की खबर ब्रिटेन पहुँची, तब सूचना स्वयं संकट का हिस्सा बन गई। टेलीग्राफ, समुद्री डाक और अखबारी तारों ने दूरी घटाई, लेकिन समाचारों की गति के साथ उनकी अपूर्णता भी आई। शुरुआती रिपोर्टें खंडित थीं, कई बार अफवाहों से भरी हुईं और प्रायः

यूरोपीय पीड़ितों की कथाओं पर केंद्रित थीं। इस सूचना-वातावरण ने ब्रिटिश जनमत में भय और प्रतिशोध की तीव्र भावना पैदा की। पाठकों के सामने भारत एक दूरस्थ भूभाग नहीं, बल्कि साम्राज्य की प्रतिष्ठा और ब्रिटिश परिवारों की सुरक्षा से जुड़ा हुआ प्रश्न बनकर आया। समाचारपत्रों ने शाक, क्रोध और साम्राज्यिक गौरव की भाषा को मिलाया। फलतः भारत में हिंसा की वास्तविकता को समझन के बजाय उसके चयनित, भावनात्मक और कई बार अपुष्ट वर्णनों ने नीति तथा जनभावना दोनों का प्रभावित किया।

ब्रिटिश संसद में पहली प्रतिक्रियाएँ भी इसी अनिश्चितता से बनीं। एक पक्ष ने विद्रोह को सैन्य कमजोरी, प्रशासनिक चूक और भारत में यूरोपीय सैनिक बल की अपर्याप्तता का परिणाम बताया। दूसरे पक्ष ने अधिक असुविधाजनक प्रश्न उठाया : क्या ईस्ट इंडिया कंपनी की विस्तारवादी और हस्तक्षेपकारी नीतियों ने स्वयं इस संकट को जन्म दिया? बेंजामिन डिजरायली और अन्य आलोचकों के वक्तव्यों में यह तर्क उभरा कि कारतूसों से आग जाकर राज्य-विलय, भूमि-अधिकार, धार्मिक आशंकाओं और स्थानीय समाज से शासन के अलगाव को समझना चाहिए। यह भारतीयों के पक्ष में किसी आधुनिक समानता-बोध का सरल प्रमाण नहीं था। संसद के अधिकांश वक्ता साम्राज्य बनाए रखने के प्रश्न से ही बाल रहे थे। फिर भी यह महत्वपूर्ण था कि ब्रिटेन के राजनीतिक केंद्र में कुछ लोग विद्रोह को केवल अपराध या सैनिक अवज्ञा कहने के लिए तैयार नहीं थे।

वहीं दूसरी ओर, प्रतिशोध की भाषा असाधारण रूप से प्रबल थी। कानपुर की घटनाओं के समाचारों ने अंग्रेजी जनमत को गहरे आघात में डाला और सामूहिक दंड, त्वरित फाँसी तथा कठोर सैन्य कार्रवाई की माँगों को बल मिला। पर ब्रिटेन में कोई एक ही नैतिक आवाज नहीं थी। कुछ उदारवादी पत्रों, मानवतावादी कार्यकर्ताओं और संसद के कुछ सदस्यों ने चेताया कि प्रतिशोध न्याय का विकल्प नहीं हो सकता। उन्होंने पूछा कि क्या अफवाह, जातीय पूर्वाग्रह और युद्धकालीन क्रोध के आधार पर व्यापक दमन उचित है। इस असहमति को साम्राज्यवाद-विरोध की पूर्ण विकसित राजनीति समझना गलत होगा, लेकिन उसे नगण्य भी नहीं कहा जा सकता। 1857 ने ब्रिटिश सार्वजनिक जीवन के सामने एक कठिन प्रश्न रखारु क्या साम्राज्य अपने को सभ्यता और कानून के नाम पर वैध ठहरा सकता है, यदि

उसका संकट-उत्तर आचरण अंध-प्रतिशोध और सामूहिक दंड से विहित हो?

महारानी विक्टोरिया और राजपरिवार के लिए भी यह संकट मात्र प्रशासनिक समाचार नहीं था। भारत ब्रिटिश राजसत्ता की बढ़ती हुई साम्राज्यिक पहचान का केंद्रीय अंग बन चुका था। 1857 के बाद कंपनी-शासन का अंत और 1858 में क्राउन के प्रत्यक्ष शासन की स्थापना इस बात का संकेत थी कि ब्रिटेन भारत को किसी व्यापारिक कंपनी के हाथ छोड़ने योग्य क्षेत्र नहीं मान सकता। महारानी की उद्घोषणा ने प्रजा के धार्मिक विश्वासों में हस्तक्षेप न करने, रियासतों के अधिकारों के प्रति संयम और कानून के समक्ष न्याय की भाषा अपनाई। उस भाषा को उसके बाद की नीतियों का स्वतः प्रमाण नहीं समझना चाहिए। फिर भी यह स्पष्ट है कि विद्रोह न शासन की शब्दावली बदल दी। अब साम्राज्य को अपने को अधिक सतर्क, अधिक पितृवत और अधिक प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी बताना पड़ा।

ब्रिटेन से बाहर भी प्रतिक्रियाएँ एक जैसी नहीं थीं। आयरलैंड में भारत की खबरें विशेष अर्थ रखती थीं। वहाँ के अनेक लोग स्वयं ब्रिटिश प्रभुत्व, भूमि-संकट और राजनीतिक अधीनता की स्मृतियों के बीच जी रहे थे। इस कारण कुछ आयरिश पर्यवेक्षकों ने भारतीय विद्रोह को साम्राज्य के भीतर अधीन समाजों की साझा पीड़ा के संकेत के रूप में देखा। यह समर्थन सर्वव्यापी नहीं था, आयरिश सैनिक और प्रशासनिक समुदाय ब्रिटिश राज्य का हिस्सा भी थे। फिर भी आयरिश अनुभव ने यह दिखाया कि साम्राज्य के भीतर का एक अधीन समाज दूसरे अधीन समाज के संघर्ष को अलग दृष्टि से पढ़ सकता है।

फ्रांस और इटली में 1857 का अर्थ यूरोपीय शक्ति-संतुलन, राष्ट्रीयता और ब्रिटिश प्रतिष्ठा के संदर्भ में बना। फ्रांसीसी प्रेस के एक हिस्से के लिए यह ब्रिटिश साम्राज्य की कमजोरी का अवसर था, जबकि दूसरे हिस्से ने औपनिवेशिक हिंसा और प्रशासनिक दावों के अंतर्विरोध पर ध्यान दिया। इटली में राष्ट्रीय एकीकरण और यूरोपीय क्रांतियों की स्मृति के बीच भारतीय विद्रोह को कभी स्वतंत्रता की आकांक्षा, तो कभी दूरस्थ साम्राज्यिक संकट के रूप में देखा गया। इन प्रतिक्रियाओं में भारत के समाज की प्रत्यक्ष समझ सीमित थी, लेकिन वे यह बताती हैं कि 1857 यूरोपीय राजनीतिक शब्दावली में प्रवेश कर चुका था।

“विद्रोह”, “क्रांति”, “सभ्यता”, “व्यवस्था” और “राष्ट्रीयता” जैसे शब्द भारत के संदर्भ में नए संघर्षों से भर गए।

संयुक्त राज्य अमेरिका में भी समाचारपत्रों ने 1857 को व्यापक रुचि से देखा। अमेरिकी समाज स्वयं दासप्रथा, संधीय राजनीति और विस्तारवाद के तनावों से गुजर रहा था। इसलिए भारतीय घटनाओं को पढ़ते समय अमेरिकी लेखकों ने व्यवस्था, नस्ल, साम्राज्य और हिंसा के प्रश्नों को अपने घरेलू अनुभवों से अलग नहीं रखा। अमेरिकी प्रेस की सहानुभूति या आलोचना को एकरेखीय नहीं माना जा सकता, किंतु यह कहना उचित है कि भारत का विद्रोह वहाँ भी यूरोपीय साम्राज्य की क्षमता और उसकी नैतिकता पर विचार का विषय बना।

रूस के लिए यह घटना क्रीमिया युद्ध के बाद की दुनिया में महत्वपूर्ण थी। ब्रिटेन की भारत-स्थित शक्ति एशिया में उसके प्रभाव और मध्य एशियाई प्रतिस्पर्धा से जुड़ी हुई थी। रूसी राजनीतिक हलकों में भारतीय संकट का ब्रिटिश शक्ति की सीमा, रसद और सैन्य निर्भरता के संकट के रूप में देखा गया होगा। पर इसे सीधे किसी रूसी योजना या निर्णायक हस्तक्षेप के प्रमाण में बदल देना इतिहास के साथ अन्याय होगा। उपलब्ध प्रतिक्रियाएँ प्रायः सामरिक रुचि और वैचारिक टिप्पणी की थीं, न कि किसी सरल भू-राजनीतिक षड्यंत्र की। 1857 ने इतना अवश्य दिखाया कि भारत में ब्रिटिश शासन की स्थिरता पूरे एशियाई शक्ति-संतुलन में महत्त्व रखती थी।

उस्मानी साम्राज्य, मिस्र और व्यापक अरब जगत तक समाचार भिन्न रास्ता स पहुँच। मुस्लिम शासक-परंपराओं, ब्रिटिश हितां और स्थानीय धार्मिक नटवर्क के कारण बहादुर शाह जफर तथा दिल्ली की घटनाएँ विशेष प्रतीकात्मकता रखती थीं। फिर भी इस्लामी जगत की प्रतिक्रिया को एक ही धार्मिक या राजनीतिक भावना में नहीं समेटा जा सकता। स्थानीय सत्ता-हित, यूरोपीय कूटनीति, समाचारों की विश्वसनीयता और भारत से दूरी, सभी ने उसके अर्थ बदल दिए। इसी तरह चीन और दक्षिण-पूर्व एशिया में ब्रिटिश वाणिज्यिक तथा सामरिक उपस्थिति के संदर्भ में भारत का संकट साम्राज्य की अजेयता पर प्रश्नचिह्न की तरह दिखाई दे सकता था।

मिशनरी संस्थाओं और चर्च-पत्रिकाओं ने 1857 को धार्मिक भाषा में भी पढ़ा। कुछ ने विद्रोह को

धर्मांतरण-विरोधी उन्माद या ईसाई मिशन के विरुद्ध प्रतिक्रिया कहा, कुछ ने इसे इस प्रश्न से जोड़ा कि क्या औपनिवेशिक सत्ता और धार्मिक प्रचार की निकटता ने भारतीय समाज में भय उत्पन्न किया। यहाँ विशेष सावधानी आवश्यक है। भारतीयों की धार्मिक आशंकाएँ वास्तविक थीं, पर उन्हें कवल अंधविश्वास कहना औपनिवेशिक दृष्टि को दाहराना होगा। दूसरी ओर, हर असंतोष को एक संगठित धर्मयुद्ध मानना भी प्रमाणों से आगे बढ़ना है। 1857 का धार्मिक आयाम राजनीतिक, सामाजिक और सैन्य कारणों से गुँथा हुआ था।

इस वैश्विक इतिहास का सबसे बड़ा सबक स्रोतों के उपयोग से जुड़ा है। समकालीन प्रेस उपयोगी है, लेकिन वह तत्कालीन भावनाओं और अफवाहों का भी दस्तावेज है। संसद की बहसें नीति-निर्माताओं के विचार बताती हैं, पर वे साम्राज्यिक हितों से मुक्त नहीं हैं। महारानी की उद्घोषणा राजनीतिक भाषा का महत्वपूर्ण प्रमाण है, लेकिन उसके आधार पर शासन की वास्तविकता का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। संस्मरण, मिशनरी लेखन और बाद के राष्ट्रवादी वर्णन भी आंशिक दृष्टियाँ देते हैं। इसलिए 1857 की वैश्विक प्रतिक्रिया को समझना तभी संभव है, जब हम समाचार और तथ्य, नैतिक आक्रोश और प्रमाण, तथा तत्कालीन भाषा और बाद की स्मृति के बीच अंतर बनाए रखें।

1857 अंततः एक ऐसा ऐतिहासिक क्षण था जिसने साम्राज्य को अपने ही दांवों के सामने खड़ा कर दिया। भारत में विद्रोह को बलपूर्वक दबा दिया गया, लेकिन उसके बाद शासन की संरचना, सेना की रचना, रियासतों के प्रति नीति, धार्मिक हस्तक्षेप की भाषा और ब्रिटिश सार्वजनिक बहस, सभी बदल गए। विश्व की प्रतिक्रियाओं ने दिखा कि भारत अब किसी दूरस्थ कंपनी-क्षेत्र का नाम नहीं था। वह उन्नीसवीं सदी की राजनीति, सूचना-जाल, नैतिक बहस और साम्राज्यिक प्रतिस्पर्धा का केंद्रीय मंच बन चुका था। 1857 का इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में पढ़ना उसके भारतीय अर्थ को कम नहीं करता, बल्कि यह समझने में मदद करता है कि भारत में उठी एक आग ने दुनिया भर में साम्राज्य, न्याय और सत्ता के प्रश्नों को क्यों प्रज्वलित कर दिया। ♦

पता : C-811, सुपरटेक प्लम ग्रीन, दिल्ली रोड, शापरी मॉल,
मेरठ-250002
मो. : 9897741150

महान क्रांतिकारी शैलबाला दीदी

□ मंजरी तिवारी



शैलबाला देवी बनारस (वाराणसी) की उन महान और जुझारु महिला स्वतंत्रता सेनानियां में से एक हैं, जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया। इतिहास के पन्नों में भले ही इन्हें वह स्थान न मिला हो जिसकी वे हकदार थीं, लेकिन काशी के स्वतंत्रता आंदोलन और सामाजिक सुधारों में उनका योगदान अतुलनीय है।

परिचय और वैचारिक पृष्ठभूमि

शैलबाला देवी का जन्म बनारस के क्रांतिकारी और सांस्कृतिक माहौल में हुआ। वह एक ऐसे दौर में सक्रिय हुई जब समाज में महिलाओं का घर की दहलीज से बाहर निकलना भी एक बड़ी चुनौती माना जाता था, लेकिन राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का आह्वान और देश की पराधीनता ने उनके भीतर की चेतना को जगाया। उन्होंने न केवल खुद को देश सेवा में डोका, बल्कि बनारस की रूढ़िवादी सामाजिक व्यवस्था को तोड़ते हुए सैकड़ों अन्य महिलाओं को भी आजादी की लड़ाई का हिस्सा बनाया।



(शैलबाला दीदी)

स्वतंत्रता संग्राम में प्रमुख योगदान

शैलबाला देवी बहुमुखी प्रतिभा की धनी थीं। उन्होंने बनारस को केंद्र बनाकर स्वतंत्रता आंदोलन के कई मोर्चों पर नेतृत्व किया :

असहयोग आंदोलन और विदेशी सामानों का बहिष्कार (1920-22)

जब गांधीजी ने असहयोग आंदोलन की शुरुआत की, तो शैलबाला देवी ने बनारस की महिलाओं की टोलियां बनाईं। वे शहर की तंग गलियों और चौराहों पर घूम-घूमकर विदेशी कपड़ों की होली जलाती थीं और लोगों से स्वदेशी (खादी) अपनाने की अपील करती थीं। उनके नेतृत्व में महिलाओं ने शराब की दुकानों और विदेशी कपड़ों के शोरूम के बाहर शांतिपूर्ण ढंग से बहद प्रभावी धरने दिए।

सविनय अवज्ञा और नमक सत्याग्रह (1930)

1930 में महात्मा गांधी के नमक कानून तोड़ने के बाद पूरे देश में सविनय अवज्ञा आंदोलन फैल गया। बनारस में इस आंदोलन को धार दन में शैलबाला देवी की मुख्य भूमिका थी। उन्होंने

सरकारी कानूनों की सरेआम अवहेलना की, जिसके कारण उन्हें ब्रिटिश पुलिस के लाठीचार्ज का सामना करना पड़ा और वे कई बार जेल भी गईं। जल की कालकोठरी भी उनके हासलों को डिगा नहीं सकी।

1942 के 'करो या मरो' आंदोलन के दौरान जब कांग्रेस के लगभग सभी बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया, तब शैलबाला देवी ने भूमिगत (Underground) रहकर आंदोलन की कमान संभाली। उन्होंने क्रांतिकारियों के बीच संदेश पहुंचाने, गुप्त बैठकें आयोजित करने और अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों के खिलाफ पर्चे छपवाकर बंटवाने का अत्यंत जोखिम भरा काम किया।

सामाजिक सुधार और महिला शिक्षा

शैलबाला देवी का मानना था कि राजनीतिक आजादी तब तक अधूरी है जब तक समाज से अशिक्षा और कुशिक्षा खत्म नहीं हो जाती।

उन्होंने बनारस की गरीब और वंचित वर्ग की महिलाओं को साक्षर बनाने के लिए रात्रि पाठशालाएं और सिलाई-कढ़ाई केंद्र शुरू किए, ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें। उन्होंने पर्दा प्रथा और बाल विवाह जैसी सामाजिक बुराइयों के खिलाफ भी मुखर होकर आवाज उठाई।

शैलबाला देवी बनारस की नारी शक्ति का वह प्रतीक हैं जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपनी सुख-सुविधाओं और पारिवारिक जीवन का त्याग कर दिया। उनका जीवन हमें सिखाता है कि जब इरादे मजबूत हों, तो कोई भी विपरीत परिस्थिति आपको अपने मार्ग से विचलित नहीं कर सकती। काशी और पूरा देश उनके इस महान त्याग और राष्ट्रप्रेम के लिए हमेशा उनका ऋणी रहेगा। ♦

पता : डी-36/197, अग्रस्त कुंडा, वाराणसी (उ.प्र.)

मो. : 7523861978

लघुकथा

सपनों की दुनिया

□ विजय श्रीवास्तव 'मिर्जापुरी'

तनु एक छोटी सी लड़की जो अपने माता-पिता के साथ दिल्ली में रहती है। उसे सपने देखना बहुत पसंद है। वह अपने सपनों की दुनिया में खो जाना चाहती है, वह कहती है, 'जब आँखें बंद करके सपना देखती हूँ, तब असली दुनिया खुलती है।' सर्द का मौसम था, तनु दोपहर में सो रही थी, वह सपने में देखती है कि वह एक सुनहरे दरवाजे के सामने खड़ी है जिस पर लिखा है 'सपनों की दुनिया में आपका स्वागत है।' वह खड़ी ही थी कि दरवाजा अपने आप खुल जाता है।

वह धीरे-धीरे भीतर प्रवेश करती है, वहाँ की खूबसूरती, चमक देखकर वह चका-चौंध रह गई। यह चमक किसी सोने, ईंटों की इमारतों की नहीं, यह खूबसूरती प्रकृति की थी। प्रकृति की ऐसी झलक उसने कभी नहीं देखी थी। चारों तरफ हरियाली, ऊँचे-ऊँचे पेड़ वह आगे बढ़ती है तो देखती है झरने से निकलकर एक नदी बह रही है, सूर्य की रोशनी पानी पर ऐसी पड़ रही है जिससे वह मोतियों की तरह चमकता प्रतीत हो रही है। तभी एक बच्ची आती है और उसे पकड़कर आगे ले जाती है, वहाँ तनु देखती है, बहुत से बच्चे हैं, कुछ आपस में खेल रहे हैं, एक लड़की दूसरी लड़की को झूला झूला रही है, कुछ बच्चे पढ़ाई कर रहे हैं और सब एक दूसरे की सहायता भी कर रहे हैं। सभी प्रेम भाव से हैं। यहाँ न कोई व्यक्ति किसी को परेशान कर रहा न किसी को हानि पहुँचा रहा, न कोई किसी गुलामी की बड़ियों में है। चारों तरफ खुशहाली है। तनु की माँ उसे बुलाती है जिससे वह अपने स्वप्न से बाहर निकल जाती है। वह अपनी माँ को अपने सपने के बारे में बताती है और उनसे पूछती है क्या कभी ऐसा हो सकता है? उसकी माँ ने उसे समझाया, प्रकृति में अनुपम खूबसूरती है, मनुष्य हरे-भरे पड़ काटता है, नदियों में कूड़ा फेकता है, शहरों को गंदा करता है, प्रदूषण (Pollution) करता है, प्रकृति का अनायास हनन। इन सब कारणां स धरती ने अपनी खूबसूरती खो दी है। प्रकृति में अपार प्रेम है और वह मनुष्य को यही सिखाती है, परन्तु मनुष्य लालच वश, ईर्ष्या वश, मोह वश, शक्ति अर्जित करने के लिए दूसरों पर हिंसा करता है, उन्हें क्षति पहुँचाता है। 'प्रकृति के पास मनुष्य की आवश्यकता पूरी करने के लिए सब कुछ है, परन्तु लालच की पूर्ति के लिए कुछ नहीं।' अगर मनुष्य इन सब बातों का ध्यान रखे तो असल दुनिया भी तुम्हारी सपनों की दुनियाँ जैसी बन सकती है। अपनी माँ की बातें सुनकर तनु ने ठान लिया— 'सपनों की दुनिया को असली दुनिया में बदलने का प्रयास करेगी।'

पता : सरस्वती विहारी कालोनी, मरुहना, शहर मिर्जापुर-231001

मो. : 9453919569

बारिश और तिरंगा

□ अनुजीत इकबाल



धौ लाधार की गाद में बसा धर्मशाला, पंद्रह अगस्त की उस धुंधली, बारिश से भीगी सुबह में एक अजीब से विरोधाभास में सांस ले रहा था। यह छोटा सा पहाड़ी कस्बा आज दो रंगों में रंगा हुआ था। एक तरफ देवदार के ऊंचे पेड़ों के बीच लहराते हुए भारत के तिरंगे झंडे और दूसरी तरफ तिब्बती बौद्ध परंपरा के रंग-बिरंगे प्रेयर फ्लैग्स यानी 'लुंगता', जो हवा के हर झांक क साथ शांति क मंत्र दिशाओं में बिखर रहे थे। उस दिन सुबह के सात बज थे, लेकिन मौसम का मिजाज कुछ ठीक नहीं था। कल रात भर हुई मूसलाधार पहाड़ी बारिश और तेज आंधी ने पूरे धर्मशाला चौक का हुलिया बिगाड़ कर रख दिया था। जगह-जगह पानी भरा हुआ था, सड़कों की ढलान से बहकर आया कीचड़ पत्थरों के बीच जम चुका था और पर्यटकों द्वारा फेंकी गई प्लास्टिक की बोतलें, शराब के कैन, चिप्स के पैकेट और हवा में उड़कर आए फटे हुए होर्डिंग्स चौक के बीचों बीच जमा थे। यही वह मुख्य चौक था, जहां सुबह नौ बजे धर्मशाला के बड़े प्रशासनिक अधिकारियों, स्थानीय नताओं और सैकड़ों पर्यटकों की मौजूदगी में स्वतंत्रता दिवस का मुख्य समारोह आयोजित होना था। ये आयोजन विशेष था क्योंकि इस बार धर्मशाला नगर निगम राज्य में सबसे ऊंचे 150 फुट ऊंचे ध्वज स्तंभ पर राष्ट्रीय ध्वज फहरा रहा था।



दिल्ली स आया तीस साल का अनिकेत, जो इस पूरे कार्यक्रम का चीफ इवेंट मैनेजर था, चौक के बीचो-बीच खड़ा होकर पागलों की तरह चीख-चिल्ला रहा था। उसका एक हाथ में वॉकी-टॉकी था और दूसरे हाथ में एक क्लिपबोर्ड, जिस पर लिख निर्देशों की सूची बारिश के पानी से हल्की गीली हो चुकी थी। अनिकेत के चेहरे पर तनाव, थकान और घबराहट की परतें साफ देखी जा सकती थीं। वह लगातार अपने सहायकों पर चिल्ला रहा था, "अरे! कोई मेरी बात सुन भी रहा है या नहीं? तीन घंटे बचे हैं कमिशनर साहब के आने में। अगर उन्होंने इस कीचड़ और कवरे के ढेर के बीच झंडा फहराया, तो मेरी नौकरी तो जाएगी ही, लेकिन मैं तुम लोगों को भी नहीं छोड़ूंगा।

अनिकेत का गुस्सा चढ़ता जा रहा था। उसके आसपास गाड़ियों का लंबा जाम लगा हुआ

था। शहर से आए कई पर्यटक अपनी गाड़ियों के हॉर्न बजा रहे थे तो कुछ टीम के लोग नेटवर्क न आने की वजह से परेशान होकर अनिकेत से ही बहस करने लगे थे। एक युवा पर्यटक जाड़ न अनिकेत के पास आकर चिढ़ते हुए कहा कि इतनी बड़बड़ती जमीन में स्वतंत्रता दिवस कैसे मनाया जा सकता है। अनिकेत ने झुंझलाकर अपनी आँखों का चश्मा उतारा और चिल्लाते हुए बड़बड़ाया, 'हद है यार! इन लोगों को देशभक्ति और आजादी के दिन की जरा भी कद्र नहीं है। बस लॉन्ग वीकेंड मिला नहीं कि पहाड़ों पर आकर कचरा फैलाने पहुंच जाते हैं। किसी को इस देश की परवाह नहीं है, बस सब नाटक करना जानते हैं।'

अनिकेत के इस गुस्से और चौक के उस भारी शोर शराबे से बेखबर, चौक के एक कोने में सत्तर साल के लोबसांग अपन काम में मग्न थे। लोबसांग एक तिब्बती शरणार्थी थे, जो पिछले तीन दशक स धर्मशाला की इन्हीं ढलानदार सड़कों और पत्थर की सीढ़ियों को साफ करने का काम करते आ रहे थे। उनका चेहरा पहाड़ी हवाओं और कड़ी धूप से झुर्रियों से भरा हुआ था, लेकिन उनकी आँखों में एक असीम ठहराव और बच्चों जैसी मासूमियत थी। उन्होंने तन पर एक पुराना, मटमैला सा चोबा पहन रखा था और हाथों में बांस की एक पुरानी, घिसी हुई झाड़ू थाम रखी थी। जब पूरा चौक अफरा-तफरी और चीख-पुकार से गूंज रहा था, लोबसांग बिना किसी हड़बड़ी के, धीरे-धीरे झुककर पत्थरों की दरारों में जमा कीचड़ को अपनी बांस की झाड़ू से बाहर निकाल रहे थे। वे एक-एक प्लास्टिक की बातल को अपन कांपते हुए हाथों से उठाते, उसे एक बड़े जूट के बोरे में डालते और फिर बड़े धीरे धीरे से उस जगह को साफ करते। उनके काम करने की गति में कोई जल्दबाजी नहीं थी, बल्कि एक अजीब सा समर्पण और भक्ति भाव था, जैसे वे किसी बौद्ध मठ का संवार रह हों।

अनिकेत का ध्यान जब लोबसांग पर गया, जो इतने बड़े मैदान के एक छोटे से कोने में बड़े आराम से झाड़ू लगा

रहे थे, तो उसका धैर्य जवाब दे गया। वह तेजी से कदम बढ़ाता हुआ लोबसांग के पास पहुँचा। अनिकेत का चेहरा गुस्से से लाल था। उसने लोबसांग के एकदम करीब जाकर कहा, 'अरे आ बाबा! ये तुम क्या कछुए की चाल स सफाई कर रहे हो? थोड़ा हाथ जल्दी चलाओ यार! तुम्हें अंदाजा भी है कि कितना कम टाइम बचा है? 8:30 बजे तक यह पूरी जगह शीशे की तरह चमकनी चाहिए। यहाँ मुख्यमंत्री का संदेश पढ़ा जाना है, देश का सबसे ऊँचा राष्ट्रीय ध्वज फहराया जाना है, आज धर्मशाला रिकॉर्ड बनाने वाला है। तुम ये कोने का कचरा छोड़ो, बस सामने-सामने का कीचड़ हटाकर चमका दो ताकि फोटो में सब ठीक ठाक दिखे।'

लोबसांग बाबा ने अपनी कांपती उंगली से तिरंगे की ओर इशारा किया, और फिर बहुत आत्मीयता से बोले, "साहब... आप बड़े शहरों वाले लोग आजादी को कैलेंडर की एक लाल तारीख समझते हैं। आपके लिए देशभक्ति का मतलब शायद बस इतना ही है मंच की सीढ़ियाँ चढ़ना, माइक पर भारी भरकम शब्द बोलना, गीतों की धुन पर तालियाँ बजाना या फिर दो घड़ी के लिए गांधी जी की तस्वीर को छूकर आगे निकल जाना।

अनिकेत की उतावली बोली हवा में अभी तैर ही रही थी कि लोबसांग बाबा ने अपनी पुरानी बांस वाली झाड़ू जमीन पर टिका दी। उन्होंने अपनी झुकी हुई कमर सीधी की। उनकी आँखों के कारा में जमान भर की धुंध जमा थी, कुछ धर्मशाला के कोहरे की, कुछ बीते बरसों की। उन धुंधली, ममता भरी आँखों से उन्होंने पहले तो अनिकेत के माथे पर खिंची परेशानी की लकीरों का धीरे से निहारा। फिर नजरें जरा ऊपर उठाई, उस ऊँचे लोहे के स्तंभ की तरफ, जहाँ तिरंगा खुलने का इंतजार कर रहा था, और फिर दूर... धौलाधार के बर्फीले सीने पर हवा से बातें करते रंग-बिरंगे तिब्बती झंडों की तरफ।

उनकी झुर्रियाँ से भरे चेहरे पर एक ऐसी मुस्कान उतरी, करुणा से भीगी हुई।

फिर व बोले। उनकी आवाज में न कोई हड़बड़ी थी, न शिकवा। बस एक गहरा, मद्धम ठहराव था,

"साहब... यह जो आजादी है न, इसे इतनी उतावली में और सिर्फ ऊपर-ऊपर से बुहारा नहीं जाता।"

लोबसांग के मुख से निकले इन चंद शब्दों में ऐसा भारीपन था कि अनिकेत और उसकी टीम के लोग एक पल के लिए ठिठक गए।

लेकिन अपनी हड़बड़ी में अनिकेत न बात को टालना

चाहा, "क्या? बाबा, सुबह-सुबह मुझे ज्ञान मत दो। मेरे पास आपकी ये बातें सुनने का बिल्कुल टाइम नहीं है। अगर काम नहीं हो रहा तो झाड़ू मुझे दो, लेकिन यहाँ भाषण के समय कीचड़ नहीं दिखना चाहिए। फिर अनिकेत कुछ साच कर बोला, "लेकिन तुम को क्या पता पंद्रह अगस्त का मतलब..."

लोबसांग ने अपनी झाड़ू को अपनी छाती से सटाकर पकड़ा और बहुत धीमी, लेकिन दृढ़ आवाज में बोलना शुरू किया, "साहब, हम तिब्बती हैं। हमने अपना देश खोया है, अपनी मिट्टी खोई है, अपने पुरखों के घर खोए हैं। पचास साल पहल जब हम तिब्बत की सीमा पार करके इस देश में आए थे, तो हमारे पास न पहनने को कपड़े सही थे, न खाने को रोटी। हमारी जेबें खाली थीं। उस वक्त इस देश की मिट्टी ने, इन धर्मशाला के पहाड़ों ने हमें अपनी गोद में शरण दी। इस भारत देश ने हमें बिना किसी शर्त के सांस लेने की जगह दी, आजादी दी।"

लोबसांग की बातें सुनकर चौक पर घूम रहे कुछ पर्यटक, अपनी दुकानों के शटर उठा रहे स्थानीय हिमाचली दुकानदार और अनिकेत के साथी कर्मचारी धीरे धीरे रुकने लग। लोबसांग की आवाज में एक ऐसा खिंचाव था जो सीधे दिल में उतरता था।

लोबसांग बाबा ने अपनी कांपती उंगली से तिरंगे की ओर इशारा किया, और फिर बहुत आत्मीयता से बोले, 'साहब... आप बड़े शहरों वाले लोग आजादी को कैलेंडर की एक लाल तारीख समझते हैं। आपके लिए देशभक्ति का मतलब शायद बस इतना ही है मंच की सीढ़ियाँ चढ़ना, माइक पर भारी भरकम शब्द बोलना, गीतों की धुन पर तालियाँ बजाना या फिर दो घड़ी के लिए गांधी जी की तस्वीर को छूकर आगे निकल जाना।

पर कभी हमसे पूछिए साहब... कि आजादी क्या हाती है? जिसका अपना कोई घर न बचा हो, उससे पूछिए कि दूसरे देश में सुकून की सांस पाना क्या हाता है। जिस भारत की मिट्टी ने हमें बिना किसी शर्त के अपने आंचल में जगह दी, जिसने हमारे टूटे स्वाभिमान को सहलाया, उस मिट्टी के प्रति थोड़ा सा अनुग्रहीत हो जाना ही तो हमारी देशभक्ति है।

यह बांस की झाड़ू मेरे लिए केवल कचरा हटाने का साधन नहीं है साहब, यह तो इस भारत देश की मिट्टी को

छूने का मेरा अपना तरीका है। अगर हम अपने ही देश को साफ नहीं रख सकते... तो फिर नीले आसमान में इतने ऊँचे झंडे को लहराने का भला क्या अर्थ रह जाएगा? आजादी कोई नुमाइश का सामान नहीं है साहब... आजादी तो चुपचाप निभाई जाने वाली एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है।"

लोबसांग के ये शब्द किसी वज्र की तरह अनिकेत के दिल पर गिरे। अनिकेत, जो पिछले दो घंटे से सिर्फ वीआईपी व्यवस्था, फाटो अपॉर्चुनिटीज और अपनी नौकरी बचाने की फिक्र में मरा जा रहा था, एकदम सन्न रह गया। चौक पर एक गहरा सन्नाटा छा गया था। जा टीम मंबर्स कुछ देर पहले वार्ड-फाई न आने पर अनिकेत से शिकायत रहे थे, वे चुपचाप लोबसांग के झुर्रियों भरे चेहरे को देख रहे थे। स्थानीय दुकानदार, जो हर साल इस सरकारी कार्यक्रम को एक औपचारिक झंझट मानते थे, लोबसांग की बातों में छुपे गहर दर्द और भारत भूमि के प्रति उनकी अगाध निष्ठा को महसूस कर रहे थे। लोबसांग ने एक ऐसे बुजुर्ग की तरह बात की थी, जिसने आजादी के छिन जान का दर्द अपने दिल में सहा था और इसीलिए वह आजादी के हर एक तिनके की कीमत समझता था। अनिकेत ने लोबसांग के उन कांपते हुए, लेकिन बेहद मजबूत हाथों की तरफ देखा, जो पिछले तीस सालों से बिना किसी इनाम या तारीफ की उम्मीद के इस दश की एक छोटी सी पहाड़ी सड़क को बुहार रहे थे, ताकि यहां आने वाले लोग सुरक्षित चल सकें। अनिकेत को अचानक अपनी संकीर्ण सोच और अपन गुस्से पर बेहद शर्मिंदगी महसूस हुई।

उसने अपनी जब से रुमाल निकाला और अपने चहरे का पसीना और बारिश की बूंदें पोंछीं। उसने बिना कुछ कहे अपने हाथ में पकड़ा हुआ वॉकी-टॉकी और क्लिपबोर्ड पास की एक चाय की टपरी की मेज पर रख दिया। उसकी आँखों में एक नया संकल्प था। वह झुका और उसने लोबसांग के पास रखी बाल्टी और एक दूसरा बांस का झाड़ू उठा लिया। लोबसांग ने हैरानी से अनिकेत की तरफ देखा। अनिकेत ने लोबसांग की आँखों में देखते हुए बहुत ही विनम्रता से कहा, "बाबा... आपने सही कहा। आजादी सिर्फ मंच पर भाषण देने से नहीं आती।"

यह कहकर अनिकेत बिना किसी हिचकिचाहट के खुद घुटना के बल बैठ गया और चौक के कीचड़ को साफ

करने लगा। दिल्ली के उस नामी इवेंट मैनेजर को, जो महंगे जूते और ब्रांडेड कपड़े पहने हुए था, मिट्टी और कीचड़ में हाथ डालते देखकर चौक पर मौजूद लोग हतप्रभ रह गए।

तभी एक अद्भुत नजारा देखने को मिला। चौक के पास चाय बेचने वाला एक स्थानीय हिमाचली युवक दौड़कर अंदर गया और दो-तीन वाईपर और झाड़ू ले आया। उसने मुस्कुराते हुए अनिकेत के बगल में काम करना शुरू कर दिया। सुबह-सुबह रील बनाने में व्यस्त तीन-चार युवा पर्यटक, जिन्होंने लोबसांग की बातें सुनी थीं, उन्होंने अपने महंगे स्मार्टफोन अपनी जेबों में रखे, अपने हाथों में ग्लव्स पहने और चौक के आसपास फैली प्लास्टिक की बोतलें और कचरा उठाने लगे। देखते ही देखते, जो धर्मशाला चौक दस मिनट पहले एक अफरा-तफरी, गुस्से और कचरे का मैदान बना हुआ था, वह सामूहिक सेवा और देशभक्ति के एक जीवंत केंद्र में बदल गया। न कोई बड़ा था, न कोई छोटा, न कोई पर्यटक था, न कोई स्थानीय। कोई पानी डालकर पत्थर धो रहा था, तो कोई झाड़ू से पत्तियों को हटा रहा था। लोबसांग बीच में खड़े होकर शांत मुस्कान के साथ सबको देख रहे थे और जहां जरूरत होती, धीरे से हाथ बढ़ाकर मदद कर देते।

पौने नौ का समय हुआ होगा। धर्मशाला के उस चौक पर फैली धुंध की मखमली परत के बीच, जैसे पत्थरों की आत्मा ही धुल कर बाहर आ गई थी। कहीं कीचड़ का नामो-निशान न था, न ही कचरे का कोई तिनका। हवा में देवदार की पत्तियों की सौंधी, भीनी-भीनी गंध तैर रही थी। तभी गाड़ियों का एक लंबा काफिला आया। अफसर साहब अपने पूरे ठाठ-बाट के साथ चौक में दाखिल हुए। मंच पर माइक अपनी जगह तैनात था, पर उस सुबह माहौल किसी दफ्तरी कागज या औपचारिकता की बंदिशों से बहुत परे, एक अनाम आत्मीयता से भर चुका था।

नौ बजते ही, वह घड़ी आ गई, जब तिरंगा का गगन स बतियाना था। कमिश्नर साहब ने डोरी को धीरे से खींचा... और छन से, केसरिया, सफेद और धानी-हरी पत्तियों वाला तिरंगा हवा के आंचल में पूरे विस्तार के साथ खुल गया। उसके भीतर सहेज कर रखी गुलाब की पंखुड़ियाँ नीचे जमीन पर इस तरह बिखरीं, मानो बारिश के बाद की भीगी मिट्टी को उसका पहला दुलार मिला हो। ठीक उसी जगह, जहां कुछ ही देर पहले कीचड़ जमा था।

तभी लाउडस्पीकर से 'जन-गण-मन' की धुन बहने लगी। चौक में खड़ा एक व्यक्ति, चाहे वह दिल्ली की भागदौड़ से आया कोई सैलानी हो, कोई हिमाचली हो या सरहद पार से अपनी जड़ें ढूँढ़ता कोई तिब्बती शरणार्थी, सब के सब एकदम सावधान मुद्रा में खड़े हो गए। सब की आँखें बस एक ही तरफ पर टिकी थीं... नील अनंत आसमान में बड़े गर्व से मुस्कुराते उस तिरंगे पर।

लाबसांग भीड़ में सबसे पीछे, एक छोट से पत्थर पर खड़े थे। उन्होंने अपने दोनों हाथ जोड़े, उनकी आँखों के कारों से आंसू की दो बूंद छलककर उनकी झुर्रियों भरे गाल पर ढुलक आईं। उन्होंने अपने कांपते हाथों को माथे तक उठाकर तिरंगे को एक धीमा लेकिन बेहद सम्मानजनक सलाम किया। उनकी वह मुद्रा बता रही थी कि उनके लिए यह देश सिर्फ एक भूभाग नहीं, बल्कि उनकी आत्मा का आश्रय था।

राष्ट्रगान समाप्त होने के बाद जब लाग एक दूसरे को स्वतंत्रता दिवस की बधाइयाँ दे रहे थे, अनिकेत भीड़ को चीरता हुआ सबसे पीछे खड़े लोबसांग के पास पहुँचा। अनिकेत के कपड़ों पर अभी भी कीचड़ के कुछ दाग लग हुए थे लेकिन उसके चेहरे पर एक अजीब सा सुकून और गर्व था। अनिकेत ने लाबसांग के सामने अपना सिर झुकाया और उनके हाथ थाम लिए।

उस ने कहा, 'बाबा, आज आपने मुझे मेरी जिंदगी का सबसे बड़ा सबक सिखाया है। इतने सालों से मैं स्वतंत्रता दिवस मना रहा था, लेकिन आजादी का असली मतलब मुझे आज इस धर्मशाला के चौक पर आपसे समझ आया। आपका बहुत बहुत शुक्रिया।'

लोबसांग ने अनिकेत से हाथ मिलाते हुए धीमी और मधुर आवाज में कहा, 'जय हिंद, साहब। इस दश की आजादी हमेशा बनी रहे और हम सब इसकी सेवा करने के काबिल बन रहें।'

धर्मशाला की ठंडी पहाड़ी हवा में तिरंगा और तिब्बती प्रेयर फ्लैग्स एक साथ लहरा रह थ और ऐसा लग रहा था मानो पूरा हिमालय उस बुजुर्ग तिब्बती सफाई कर्मचारी की निष्ठा और जगी हुई चेतना को नमन कर रहा हो। ♦

पता : 4, राम रहीम एस्टेट, नीलमथा, लखनऊ-226002

मो. : 9919906100

प्रेम और स्वाभिमान

□ सविता दास



दिसंबर की शाम थी। सड़क पर चारों ओर चहल-पहल थी। कड़के की ठंड के बावजूद लोग ऐसे दिखाई दे रहे थे, मानो तपती गर्मियों की स्मृतियों के सहारे ठंड से उसका हर्जाना वसूल करना चाहते हों। दुकानें अपनी पूरी सजावट के साथ ग्राहकों को आमंत्रित कर रही थीं। गाड़ियों के हॉर्न और शहर की निरंतर आपाधापी के बीच इशिता एक होटल में अकली बैठी चाय की प्रतीक्षा कर रही थी।



आस-पास बैठे लोग बार-बार उसकी ओर देखने लगते थे—जैसे किसी स्त्री का अकेले होटल में बैठकर चाय पीना असामान्य या संदिग्ध हो। वेटर मेज पर गर्म चाय और नमकीन रख गया। चार लोगों की मेज पर इशिता अकेली थी। वह मोबाइल पर नजर टिकाए कुछ करन का अभिनय कर रही थी, जबकि वास्तव में अपने ऊपर टिकती निगाहों की उपेक्षा करने का प्रयास कर रही थी।

देव के निधन को अभी दस महीने ही बीते थे। देव एक बड़ी चाय फैक्ट्री में स्टीम बॉयलर इंजीनियर थे। मशीनों की देख-रेख के साथ-साथ कारखाने में आवश्यक उपकरणों और पुर्जों की व्यवस्था की जिम्मेदारी भी उन्हीं पर थी। विवाह के बाद इशिता और देव ने कलकत्ता छोड़ असम में रहना शुरू किया था।

एक रात फैक्ट्री से लौटकर देव ने सर्दी-जुकाम की शिकायत की थी। पिछले महीने कोलकाता की यात्रा से लौटे थे, संभवतः वहीं ठंड लग गई थी। अगली सुबह खौंसते समय उनका मुँह स हल्का-सा खून निकला। इशिता घबरा उठी। उसकी चीख सुनकर मकान-मालिक दौड़ते हुए आए और एंबुलेंस से देव को अस्पताल पहुँचाया गया। जाँच के बाद डॉक्टर ने बताया कि देव अब इस संसार में नहीं रहे। इशिता स्तब्ध रह गई।

उसे याद आया—पिछली ही रात देव कितने उत्साह से उसके लिए लाया हुआ एक महँगा मेकअप बॉक्स खोल-खोलकर दिखा रहा था। उनकी शादी की दूसरी सालगिरह का उपहार था वह। इशिता को मेकअप का विशेष शौक नहीं था। उसने सहज भाव से कहा था, "मुझे इन सब चीजों का इस्तेमाल भी नहीं आता।"

देव मुस्कराया था— “कोई बात नहीं, मैं सिखा दूँगा।”

उस क्षण इशिता खिलखिलाकर हँस पड़ी थी। अब जब उसने दब के ठंडे पड़े शरीर को छुआ, ता जैस पूरा अस्तित्व काँप उठा। “देव! ये क्या हो गया...!”

वह चीखती रही, विलाप करती रही, और अंततः सुध-बुध खो बैठी।

मकान-मालिक ने इशिता के ससुराल वालों को सूचना दी। देर रात वे असम पहुँचे। उनके आने तक इशिता देव के पास बैठी रही—कभी उसे निहारती, कभी मुस्कुराती और फिर अचानक फूट-फूटकर रो पड़ती।

देर रात सास-ससुर पहुँचे। इकलौते बेटे को खोकर माँ जैसे जड़ हो गई थीं। पिता की सिसकियाँ वातावरण में घुली हुई थीं। उसी रात अंतिम संस्कार की व्यवस्था की गई। शोक इतना गहरा था कि कोई किसी को संभालने की स्थिति में नहीं था।

अगली सुबह इशिता ने सास-ससुर से कुछ खाने के लिए कहा, पर उन्होंने न कोई उत्तर दिया, न उसकी ओर दृष्टि उठाई। इशिता स्वयं भी गहरे आघात में थी, फिर भी यह सोचकर चुप रही कि पुत्र-शोक का भार उनसे अधिक और कौन जान सकता है।

कोलकाता में देव का अपना घर था और पिता का व्यवसाय भी। नौकरी के कारण वे असम में किराए के मकान में रह रहे थे। अपना घर बनाने के सपने अभी आकार ही ले रहे थे कि सब कुछ बिखर गया।

तीसरे दिन देव के माता-पिता कोलकाता लौटने की तैयारी करने लगे। उन्हें तैयार हात दख इशिता को लगा कि वे उसे भी अपने साथ चलने को कहेंगे। किंतु उन्होंने उसकी आर देखा तक नहीं। यह उपेक्षा इशिता को भीतर तक विचलित कर गई।

उन्होंने प्रेम-विवाह किया था—माता-पिता की सहमति से। फिर भी आज इशिता को लग रहा था कि शायद वह कभी उनके परिवार का हिस्सा बन ही नहीं पाई।

संकोच तोड़कर उसने कहा, “मैं भी आपके साथ चलूँगी। अब यहाँ अकेली कैसे रहूँ?”

देव की माँ की आवाज कठोर थी— “हम तुम्हें अपने

साथ नहीं ले जा सकते। देव की ज़िद पर हमने यह विवाह स्वीकार किया था। पर तुम उसे संभाल नहीं पाई। अब तुम्हें देखकर हमें उसकी याद और पीड़ा ही मिलेगी। अब तुम अपना रास्ता स्वयं देखो।”

यह कहकर वे दोनों घर से निकल गए। इशिता जैस जमीन पर बैठ गई। उसे कुछ कहने का अवसर भी नहीं मिला। देव उससे अत्यंत प्रेम करता था—फिर उसके माता-पिता के भीतर इतनी कठोरता कैसे समा सकती थी? जीवन में पहली बार उसे स्वयं का पूरी तरह पराजित महसूस हुआ।

इशिता के माता-पिता फोन पर उसे ढाढ़स बँधाते रहे। पिता को पहले हृदयाघात हो चुका था, इसलिए वे असम नहीं आ सकते थे। माँ उनकी देखभाल में लगी हुई थीं।

इशिता ने अपना मोबाइल बंद कर दिया। शायद वह समय को थाम लना चाहती थी। उसका जीवन—सफर मानो वहीं रुक गया था। चारों ओर अंधकार था और दिशाएँ घने कोहरे में विलीन हो चुकी थीं।

दो दिन बीत गए। वह अपने कमरे

में बंद रही—देव की तस्वीर को सीने से लगाए, मौन और निःशब्द।

अगली सुबह दरवाज़ पर मकान मालिक शुभम् और उनकी पत्नी खुशबू खड़े थे।

वे घबराए स्वर में पुकारते हैं— “इशिता जी, दरवाजा खोलिए... आप दो दिनों से बाहर दिखाई नहीं दीं। सब ठीक तो है न? कहीं तबीयत तो नहीं बिगड़ गई?”

इशिता किसी तरह अपनी जड़ता से बाहर निकली और दरवाजा खोला। बाल बिखरे हुए हैं, आँखें धँसी हुई, और कपड़े अस्त-व्यस्त। उसकी हालत देखते ही दोनों चौंक जाते हैं। बिना कुछ कहे वह उन्हें अंदर आने का इशारा करती है और खुद भी भारी कदमों से भीतर चली जाती है।

“आप इस तरह बिखर जाएँगी तो कैसे चलगा, इशिता जी? पूरी जिंदगी पड़ी है आपके सामने। आपके घरवाले भले साथ न हों, पर हम हैं न।”

खुशबू ने अपनत्व भरे स्वर में कहा। शुभम् ने भी हौसला बढ़ात हुए आग जोड़ा, “एक बार देव जी की फैक्ट्री में जाकर बात कर लीजिए। हो सकता है आप वहाँ काम संभाल सकें। माना कि आपने इंजीनियरिंग नहीं की है, लेकिन कारखाने में इस्तेमाल होने वाले सामान की सप्लाय तो आप दे ही सकती हैं। शुरुआत कहीं न कहीं से करनी ही हाती है।”

इशिता हर तरफ से निराश हो चुकी थी और इस तरह के अपनेपन की उसे बिल्कुल उम्मीद नहीं थी। उसने भर्राई हुई आवाज में खुशबू का हाथ थाम लिया और कहा— “आप दोनों ने मुझ मेरी खोई हुई उम्मीद लौटा दी है। अब मैं देव का काम आगे लेकर जाऊँगी... चाहे जैसे भी हो।”

श्राद्ध और अन्य सभी कर्म पूरे हो जाने के बाद एक महीना बीत चुका था। इशिता अब लोगों की नजरों में सामान्य दिखने लगी थी, पर उसके भीतर का जीवन जैसे कहीं ठहर गया था। हर दिन वह स्वयं को समेटकर उठती, देव की स्मृतियाँ को चुपचाप अपने भीतर रख हुए। उसकी आँखें हर समय किसी प्रतीक्षा में रहती—एक पुकार की, एक बुलावे की। उसे लगता, यदि देव के माता-पिता एक बार उसे अपना लें, तो वह देव की जगह नहीं, पर उसके अधूरे स्नेह का सहारा बन सकेगी। उनकी सूनी देहरी पर बैठकर वह अपने आंसुओं से उनके दुख को धो देना चाहती थी, पर हर बीतता दिन उसकी उम्मीद को और भी निर्बल कर देता।

देव की सेविंग्स में थोड़े-बहुत पैसे तो थे, पर वे ज्यादा दिनों तक चलने वाले नहीं थे। ऊपर से रोजमर्रा के खाने-पीन का खर्च अब इशिता के सामने एक बड़ा सवाल

बनकर खड़ा था। कई दिनों की ऊहापोह और डर के बाद वह थोड़ी हिम्मत बटोरकर देव की फैक्ट्री पहुँची।

वहाँ उसे देखकर देव के कलीग भावुक हो उठ। किसी ने हालचाल पूछा, तो किसी ने ढाढ़स बँधाया—जैसे देव की अनुपस्थिति में भी उसका नाम वहाँ जीवित हो।

मैनेजर से मिलने के बाद इशिता को पहली बार कुछ तसल्ली महसूस हुई। उन्होंने गंभीर लेकिन अपनत्व भर स्वर में कहा, “आप रोज फैक्ट्री आया कीजिए। देव जो काम संभालत थे, उसे धीरे-धीरे सीख लीजिए। सामान की सप्लाय भी आप ही देखें—जैसे देव देखते थे।”

उन शब्दों में सहानुभूति भी थी और भरोसा भी। फैक्ट्री से बाहर निकलते समय इशिता को लगा, जैसे लंबे अंधेरे के बाद कहीं दूर एक छाटी-सी रोशनी दिखी हो। रास्ता कठिन था, पर अब उसके पास रुकने का विकल्प नहीं था—उसे देव के अधूरे काम को आगे बढ़ाना था, अपने लिए भी और उसकी याद के लिए भी।

फैक्ट्री में पहला दिन इशिता के लिए आसान नहीं था। मशीनों की आवाज, कागजों की फाईलें और देव की खाली कुर्सी—सब कुछ उसे बार-बार भीतर तक झकझोर देता था। कई बार हाथ काँप जाते, समझ नहीं आता कहाँ से शुरू करे, पर वह खुद को संभाल लेती। देव के कलीग धैर्य से उस हर छोटी-बड़ी बात समझाते, जैसे सब मिलकर उसे गिरने से थामे हुए हों। शाम ढलते-ढलते थकान उसके चेहर पर साफ झलकने लगी थी, लेकिन उस थकान में भी एक अजीब—सी तसल्ली थी—आज उसने एक कदम आगे बढ़ाया था। हार की तरफ नहीं, जिम्मेदारी की तरफ।

कुछ महीनों तक लगातार काम करने के बाद इशिता अब अपने काम में निपुण होने लगी थी। चेहर पर फिर से हल्की—सी मुस्कान लौट आई थी और बातों में भी अपनापन झलकने लगा था। लेकिन शाम को घर लौटते ही वही सन्नाटा उसे फिर घेर लेता। देव के बिना वह घर अब उसे काटने को दौड़ता, और समय था कि जैसे ठहर गया हो—बीता ही नहीं।

इन्हीं सूनी शामों में एक दिन वह एक चाय की होटल में जाकर बैठती है और उसके मन में यह विचार आया, और उसने तय किया कि वह शाम छह से नौ बजे तक अपने मकान के नीचे एक छोटी-सी चाय की दुकान खालेगी।

वहाँ लोगों की आवाजाही रहेगी, उसका मन भी लगा रहेगा और सबसे बढ़कर—खुद से कुछ करने की तसल्ली उसे भीतर से मजबूत बनाएगी।

खुशबू और शुभम की मदद से इशिता ने आखिरकार एक छोटी—सी चाय का स्टॉल खोल लिया। शुरु में लोग झिझकते हुए आए, फिर धीरे—धीरे वहाँ चहल—पहल बढ़ने लगी। फैंक्ट्री के बाद का समय अब उसे काटता नहीं था, वह व्यस्तता और अपनापन लिए बीतने लगा था। चाय के साथ—साथ वह अब खुद से कुछ खाने—पीने की चीजें भी बनाने लगी—वही सब, जो कभी देव को बहुत पसंद थीं।

अजीब—सा सुकून था उस काम में। जैसे हर प्याले में, हर खुशबू में, देव कहीं न कहीं उसके साथ खड़ा हो। इशिता को लगने लगा था कि वह देव को अब अपने से कभी अलग नहीं होने देगी—न यादां में, न अपन जीवन की चाल में।

कुछ महीने बीत चुके थे। एक दिन अचानक इशिता के मोबाइल पर एक अनजान नंबर से कॉल आया। उधर से एक पुरुष की सधी हुई आवाज सुनाई दी—“हैलो...”

इशिता न झिझकते हुए फोन उठाया। “नमस्ते, इशिता जी। मैं अजय घोष बोल रहा हूँ... उम्मीद है परेशान नहीं कर रहा हूँ।”

उधर से आवाज में संकोच भी था और आत्मविश्वास भी। “नहीं... कहिए।”

उसने संक्षिप्त उत्तर दिया, जैसे शब्दों में पीछ अपनी दूरी छुपा रही हो। “दरअसल, आपकी दुकान के पास से अक्सर गुजरता हूँ। कभी—कभी रुककर चाय भी पी लेता हूँ। आज हिम्मत करके फोन कर लिया।”

क्षण भर की चुप्पी के बाद वह बोला, “आपकी चाय में कुछ अलग है... सिर्फ स्वाद नहीं, एक सुकून।” इशिता अनायास मुस्कुरा उठी।

“शायद आदत हो गई है बनाने की,” उसने हल्के से कहा। “नहीं,” अजय ने तुरंत टोका, “आदत से ऐसा स्वाद नहीं आता। आप इस काम को सिर्फ बचने के लिए नहीं करतीं, जीती हैं उसे।”

उसके लिए ये शब्द नए थे। “आप क्या काम करते हैं?” इशिता ने पहली बार सवाल किया। “काम तो बहुत किए,” अजय हँसा, “पर आजकल अच्छे काम पहचानने की कोशिश करता हूँ।”

फोन के उस पार हल्की—सी खामोशी छा गई। अजनबीपन कहीं पिघलने लगा था। कॉल काटते समय इशिता को महसूस हुआ—यह बातचीत सामान्य नहीं थी,

जैसे किसी ने उसकी मेहनत को पहली बार सच में देखा था। अब फैंक्ट्री और चाय की दुकान में इशिता कुछ इस तरह व्यस्त हो गई थी कि उसके पास न ता दुखी हाने का समय था न ही कुछ और सोचने का। देव की एक बड़ी तस्वीर उसने अपनी चाय की दुकान में लगा रखी थी।

अजय घोष का इशिता की दुकान पर आना—जाना अब नियमित हो गया था। कभी चाय की तारीफ करता, कभी भीड़ देखकर मुस्कुरा देता। एक दिन उसने सहजता से कहा, “आपकी चाय में सिर्फ स्वाद नहीं है इशिता जी, एक अपनापन है... इसे आगे बढ़ाइए।”

वक्त के साथ इशिता की चाय आसपास की फैंक्ट्रियों और दफ्तरों में पहचानी जाने लगी। स्टॉल छोटा पड़ने लगा, और फिर एक दिन उसने साहस करके उसे एक छाटी—सी दुकान में बदल दिया। वही चाय, वही स्वाद—बस जगह बड़ी हो गई थी।

सालों बाद जब वही दुकान एक सादे लेकिन ससम्मान होटल में तब्दील हुई, तो इशिता सिर्फ एक व्यवसायी नहीं, एक मिसाल बन चुकी थी। कई पुरुष उसकी आर आकर्षित होत—काई उसका संघर्ष से, कोई उसकी आत्मनिर्भरता से, ता काई उसकी शांत मुस्कान से।

पर इशिता जानती थी, यह आकर्षण उसकी सुंदरता का नहीं, उसकी मजबूती का परिणाम था। और उसने तय कर लिया था—वह अब किसी सहारे की नहीं, खुद अपने नाम की पहचान बनेगी।

एक दिन अजय ने बहुत साहस बटारकर इशिता से मिलने का आग्रह किया। चाय की हलचल से थोड़ी दूर, शांत—से कोने में वह कुछ पल चुप रहा, फिर धीमे लेकिन स्थिर स्वर में बोला—“इशिता जी, मुझे पता है आप एक स्वाभिमानी स्त्री हैं। आपने जो जीवन जिया है, और जिस तरह आप अपनी लड़ाई खुद लड़ रही हैं, उसका मैं दिल से सम्मान करता हूँ।” उसने एक क्षण रुककर इशिता की आँखों में देखा, “मैं यह नहीं कह रहा कि आपका सहारे की जरूरत है... पर अगर आप अनुमति दें, तो क्या मैं इस यात्रा में

आपका साथी बन सकता हूँ? क्या मैं आपकी इस लड़ाई में आपके साथ चल सकता हूँ?"

अजय स्वयं एक प्रतिष्ठित व्यवसायी था—समाज की नजरों में एक एलिजिबल बैचलर। लेकिन उस पल उसके लिए ये सब परिचय बेमानी थे। उसके सामने सिर्फ इशिता खड़ी थी—एक स्त्री, जिसने टूटकर भी खुद को समेट लिया था।

इशिता के लिए यह प्रस्ताव किसी आश्वासन से ज्यादा, एक सम्मानजनक आमंत्रण था—जिसका उत्तर उसे अपन भीतर से खोजना था।

इशिता खुद इस बात से चकित थी कि अजय का यह प्रस्ताव उसे भावुक क्यों नहीं कर रहा था। इतने समय बाद, देव के माता-पिता के बेरुखे व्यवहार के बाद, अजय ही पहला व्यक्ति था जिसने उसके मन को सचमुच स्पर्श किया था। चाहती तो वह उस पल भावुक हो उठती—अजय का हाथ थाम लेती। दा टूक आँसू बहा लेती और शायद एक नई शुरुआत को स्वीकार भी कर लेती।

पर ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। उसके भीतर कोई उफान नहीं था। कोई हड़बड़ी नहीं। बल्कि एक गहरी, ठहरी हुई शांति थी—जैसा उसने दर्द से समझौता करना सीख लिया हो। वह जान चुकी थी कि सहारा मिलना और खुद खड़ा होना, दानों अलग बातें हैं। और इस बार वह किसी निर्णय को भावनाओं के भरोसे नहीं छोड़ना चाहती थी, उसे समय चाहिए था—अपने मन को टटोलने का, अपनी नई पहचान को समझने का।

इशिता ने कुछ क्षण चुप रहकर बड़ी गंभीरता से कहा— "अजय जी, आपके इस प्रस्ताव का और मेरे प्रति जो भी भाव है, मैं उसका दिल से सम्मान करती हूँ। आपने मुझे इस योग्य समझा, इसके लिए मैं आपकी आभारी हूँ।"

फिर उसने संयत स्वर में आगे कहा, "लेकिन मैं अपनी जिंदगी में देव की जगह किसी और का नहीं द सकती। मैं जानती हूँ कि देव जहाँ भी होंगे, शायद यही चाहते होंगे कि मुझ भी कोई साथी मिले, कोई सहारा मिले... पर सच यह है कि मैं स्वयं ऐसा नहीं चाहती।"

उसकी आँखों में न आँसू थे, न दुविधा—सिर्फ स्पष्टता थी। "आप एक बहुत अच्छे इंसान हैं, अजय जी। और इसी वजह से मैं आपके साथ कोई नाइंसाफी नहीं कर सकती। बिना पूरे मन के किसी रिश्ते को स्वीकार करना, न आपके साथ ठीक हागा, न मेरे साथ।"

उस पल इशिता ने महसूस किया—यह निर्णय किसी कमी से नहीं, बल्कि उसकी पूर्णता से जन्मा था। अजय ने इशिता के चेहरे पर दृढ़ता और आत्मविश्वास देखा। उसने महसूस किया कि सामने खड़ी स्त्री सिर्फ सशक्त ही नहीं, बल्कि अपने प्रेम की गहराई और निष्ठा में भी अद्वितीय है। इशिता का देव क प्रति अटूट प्रेम, और अपने निर्णय में स्पष्टता, न अजय का दिल में उसका सम्मान और भी बढ़ा दिया।

वह कुछ क्षण चुप रहा, फिर धीरे से बोला— "इशिता जी, शायद मैंने जल्दी में कुछ कहा। मैं आपसे माफी चाहता हूँ। मेरे सामने आपने जो सच्चाई और मजबूती दिखाई, उसके सामने मेरा प्रस्ताव बेमानी था।"

इशिता ने सिर हल्का सा झुकाकर उसकी माफी स्वीकार की, लेकिन उसने यह भी महसूस किया कि यह संवाद, दोनों के लिए किसी सीख या समझौते से कम नहीं था—सम्मान और आत्मसम्मान की पाठशाला थी, जिसमें कोई हारता या जीतता नहीं। ♦

पता : लाहित चौक, सेंट्रल जेल के निकट, डाक-तेजपुर, शोणितपुर, असम-784001
मो. : 9435631938

बता हिन्द वासी कहाँ तेरी मंजिल?



एस.एन. सिंह



बता हिन्द वासी कहाँ तेरी मंजिल?
कहाँ है वो कश्मीर की वादियां,
गन्धर्व गायन कला शोखियां।
शिला तक्ष के गुप्तविष्णु कहां है,
गुरु शिष्य शिशु चन्द्रगुप्त कहां है ॥

बता हिन्दवासी——

पोरस सिकन्दर कहानी नहीं है,
मिटे राष्ट्र के हित जवानी नहीं है।
निहित स्वार्थ डूबे मनुज तो भरे है,
दिए अस्थि पंजर वो दानी नहीं है ॥

बता हिन्दवासी———

गुजरता हुआ जिन्दगी के सफर से,
मचलता हुआ बुजदिली के किनारे।
कि अथवा तेरी राह है उस जमीं पर,
जहां पर गरीबों की किस्मत उबारे ॥

बता हिन्दवासी———

ये राणा की रणभूमि कुम्भा की थाती,
लगे घाव चौरासी सांगा की छाती।
वो शमसीर जंगी यहां अब नहीं है,
क्षरण रोक दे ऐसे सूरमा अब नहीं है ॥

बता हिन्दवासी———

रोती हैं माताएं, दिल रो रहा है
लेती हैं बहनें यहां सिसकियां।

बेटी बेटों की हालत यहां अब न पूछो,
सभी रो रहे बोई विष की हैं फलियां ।।

बता हिन्दवासी————

दिल्ली तो है दिल्ली अब नहीं है
सदानीरा जमुना में पानी नहीं है ।
विविध गाजबाजे बजैया बहुत हैं,
गोकुल ता है पर कन्हैया नहीं है ।।

बता हिन्दवासी————

गंगा सरजू अयोध्या यहीं है
तपोमूर्ति त्यागी भरत अब नहीं है ।
तजे राजसत्ता बसे बन उदासी,
सरिस राम लक्ष्मण के भाई नहीं है ।।

बता हिन्दवासी————

औघड़ की नगरी काशी यहीं है
मगर भव भवानी निवासी नहीं है ।
वो साकत महकालिकें अब कहां है,
हुंकार हुगली रवानी नहीं है ।।

बता हिन्दवासी————

शिवाजी मराठा वो मालव कहां है
तिलक गोखले जैसे नायक नहीं है ।
वट पंचपल्लव की कुटिया कहां है,
मिटे नारी रक्षण जटायु नहीं है ।।

बता हिन्दवासी————

द्रविण चेर चोलम वो पंडया कहां है
शीलप्पादिकारम अड़ियल नहीं है ।
सोखे समुंदर वो कुम्भज कहां है
बघे सेतु पूजित रामेश्वर नहीं है ।।

बता हिन्दवासी————

चित्रांगदा बभ्रुवाहन नहीं है
प्रकृति पूजिता सात बहनें कहां है ।
कहां कामरु औ त्रिपुरसुन्दरी हैं
सर्वेश्वरी सिद्धिदात्री कहां है ।।

बता हिन्दवासी————

हैं दंग यहां राज शोला उगलत
हिन्दू भी मरते हैं मुस्लिम भी मरते ।
ये झगड़ा है स्वारथ के मारों का प्यारे
शंकर मुहम्मद वही नाम जपते ।।

बता हिन्दवासी————

आज घर-घर यहां कंस चाणूर हैं
छल कपट वासना मद में सब चूर हैं ।
पांस पड़ते शकुनि के अभी भी यहां
इतिहास अपने को दुहरा रहा है ।।

बता हिन्दवासी————

क्षरण धर्म का आज यूं हो रहा है
हरण चीर पांचाली का हा रहा है ।
सभा मौन है राजा जन्मांध बैठा
कन्हैया बचा ले तेरा आसरा है ।

बता हिन्दवासी————

जगन्नाथ कान्हा फिर आएंगे
नूर भर मानवी में समा जाएंगे ।
राष्ट्र के हित जिए राष्ट्र के हित मरे
कल्कि बन कान्हा कलयुग में आ जाएंगे ।।

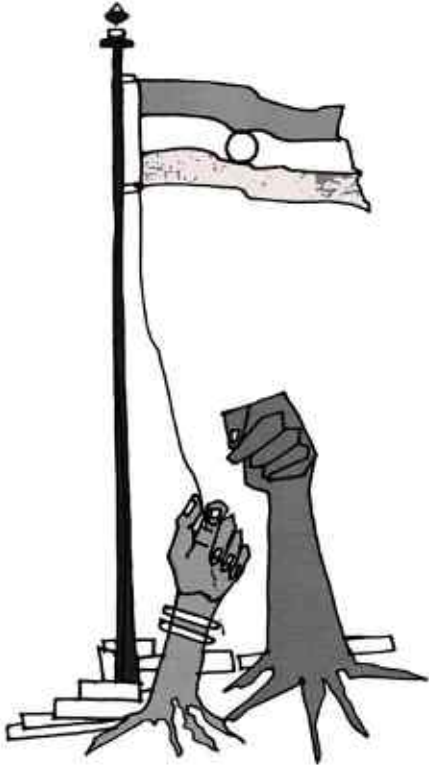


पता : सरोजनी नगर, लखनऊ
मो. : 7305215332

वंदे मातरम्



भारती मिश्रा



तिरंगे में बसा एक प्राण वंदे मातरम्
हमारे देश का अभिमान वंदे मातरम्

भगत, अशफाक, बिस्मिल, राजगुरु बनकर जिएं
पुकारे उनका हर बलिदान वंदे मातरम्

खड़े रहते हैं सरहद पर हमारे वीर जो
तिरंगा ओढ़, गाएं गान वंदे मातरम्

वतन की माटी है चंदन, तिलक इसकी करें
धरा को चूम, बोले किसान वंदे मातरम्

है पावन गंग की धारा, हवा मधुमय बहे
कोयलिया कूके मीठी तान वंदे मातरम्

दरख्तों से अरुण की ज्योति लिपटी झूमती
धरा का कर रही यशगान वंदे मातरम्

जमीं पर छोड़कर निज प्रेम की परछाई को
वतन का ऊंचा करती मान वंदे मातरम्

♦
पता : रेलवे हण्डर रोड, पश्चिमी लोहानीपुर,
कदमकुआँ, पटना-800003
मो. : 9308162129

कुछ लोग



कौशिकी भारद्वाज

कुछ लोग होते हैं नहीं
आग बन जाने के लिए
सपने जी जाने के लिए

कुछ लोग होते हैं
बस आके चल जाने के लिए
सपने सजाने के लिए

कोशिश भी वा करते नहीं
बस हार जाते हैं
कुछ लोग होते हैं
बस हार जाने के लिए
सपने सजाने के लिए



जी के भी कुछ ना किया तुमने
तुम हार मान लो अभी
कुछ लोग होते हैं
बस ये बताने के लिए
सपने सजाने के लिए

तुम्हें करना है क्या आगे
ये फैसला तुम्हारा
जीवन भी है तुम्हारा
साहस भी है तुम्हारा

पर कुछ लोग होते हैं नहीं
लड के जीत जाने के लिए

सपने जी जाने के लिए
वो होते हैं बस यूँही
आक चले जाने के लिए...

कुछ लोग होते हैं यूँही
आंसू बहाने के लिए

तुम भी वही बनके रहो
क्या ये फैसला तुम्हारा
माना की सब कठिन है
पर कुछ लोग होते हैं
लडके जीत जाने की लिए
सपने जी जाने की लिए

एक सपना जो टूटा
तो क्या हुआ
कुछ लोग होते हैं
नए सपने बनाने के लिये

तू हार मत ले मान
दिल मे ले तू अब ये ठान
कुछ लोग हाते हैं
हार के भी जीत जाने की लिए
सपने सजा के जी जाने के लिए

◆

पता : नवीन 5/8, राजकीय कालोनी,
बादशाह नगर, लखनऊ
मो. : 7905193832



स्वाति बरनवाल

धरती

मैं धान हूँ,
मैं पतवार हूँ,
मैं खेत हूँ,
मैं ही खलिहान हूँ,
मैं धुन हूँ तो मैं ही राग भी।

मैं प्रेम भी हूँ और रक्तपात भी
मैं सीमा हूँ,
तो मैं ही सीमांत भी
मैं ही तेरी नाक हूँ,
मैं ही तेरा नक्शा भी।

मैं ही तेरी जीवनदायिनी,
मैं मृत्यु की कोख भी...
मैं मिट्टी हूँ,
हूँ मैं स्त्रीलिंग भी

मैं ही सर्वथा हूँ,
मैं ही सर्वव्यापिनी हूँ।

युद्ध

युद्ध गोली है, युद्ध बारूद है
युद्ध सिहरन है, युद्ध धमाका है
युद्ध लहू है, युद्ध पतन है
युद्ध शोक है विषाद है।

युद्ध रणनीति है, युद्ध कूटनीति
है

युद्ध चक्रव्यूह है, साजिश है
प्रतिव्यूह है, व्याकुलता है
युद्ध प्रतिशोध है, प्रतिकार है।

युद्ध भय है, अवसाद है
युद्ध निराशा है, युद्ध कहर है
युद्ध भुखमरी है, युद्ध अकाल है
युद्ध हत्या है
युद्ध आंसू है, तकलीफ है,
मनुष्य का नाश है, संसार का
विनाश है।

युद्ध एक भ्रम है, सनक है
शांति से जीने के लिए।

♦ पता : ग्राम व

पोस्ट—कठिया मठिया,
परशुरामपुर, प. चपारण,
वेतिया

मो. : 6201032949



नंदिनी जोशी

नारी

प्रगति का आधार तुम हो,
जगत का व्यवहार तुम हो।
शक्ति का अवतार तुम हो,
साधना की पुकार तुम हो।
मां काली का अवतार तुम हो,
प्रेम का संसार तुम हो।
ज्वाला की हुंकार तुम हो,
नाव की पतवार तुम हो।
हर रूप में स्वीकार तुम हो,
सृष्टि का आधार तुम हो।

♦

पता : शास्त्री नगर खलीलाबाद
272175 (उ.प्र.)
मो. : 6306231171



आशीष साथी

सुख

सुख कहां जीवन में है ?
कई दुख अंतर्मन में हैं।
वही पढ़ पाते हैं व्यथा
करुणा जिनके मन में है।
पीढ़ियों का पुण्य मिले
कई आशीष तर्पण में हैं।
मुस्कानों की बात अलग
दुख बहुत पर मन में हैं।
धरती ही जाने सावन में
क्या सुख जेठ तपन में है।
यहां तो केवल दुःख द्वंद्व
सारे स्वर्ग गगन में हैं।
साथी बहुत सुख, बहुत सुख
सच कहूं अपनेपन में है।

♦

पता : उदइया, जिला—झूगरपुर,
राजस्थान
मो. : 9784509920

आधुनिक युग में वेद विद्यालयों की प्रासंगिकता

□ नीलम कुमारी सिंह



वेद शब्द संस्कृत की 'विद्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है जानना, ज्ञान प्राप्त करना। वेद मानव जीवन के सर्वांगीण विकास का आधार हैं। इनमें आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक जीवन से संबंधित ज्ञान का विशाल भंडार समाहित है। भारतीय संस्कृति में वेदों को ईश्वरप्रदत्त ज्ञान माना गया है।

वेद विद्यालय केवल शिक्षा संस्थान नहीं हैं, बल्कि समाज में संस्कारवान, सेवा-भावी और राष्ट्रनिष्ठ व्यक्तित्वों का निर्माण करने वाले केंद्र हैं। यहाँ से शिक्षित विद्यार्थी समाज में धर्म, संस्कृति और मानवीय मूल्यों के प्रचार-प्रसार का कार्य करते हैं। संस्कृत विश्व की सबसे प्राचीन और वैज्ञानिक भाषाओं में से एक मानी जाती है। वेद विद्यालय संस्कृत भाषा के अध्ययन और प्रचार-प्रसार का प्रमुख केंद्र हैं। संस्कृत के माध्यम से विद्यार्थी भारतीय दर्शन, साहित्य और शास्त्रों का गहन अध्ययन कर सकते हैं।



वेद विद्यालय भारत की प्राचीन ज्ञान परंपरा और सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। वे केवल वेदों की शिक्षा ही नहीं देते, बल्कि चरित्र निर्माण, नैतिक मूल्यों, आध्यात्मिक उन्नति और सामाजिक उत्तरदायित्व का भी विकास करते हैं। वर्तमान समय में जब आधुनिकता के प्रभाव से पारंपरिक ज्ञान और संस्कारों का ह्रास हो रहा है, तब वेद विद्यालय भारतीय संस्कृति की रक्षा और राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए एक महत्वपूर्ण आवश्यकता हैं। इसलिए समाज, सरकार और सभी जागरूक नागरिकों को वेद विद्यालयों के संरक्षण और विकास में अपना योगदान देना चाहिए।

भारतीय संस्कृति और ज्ञान परंपरा के संरक्षण का आधार

भारत विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यताओं में से एक है। हमारी संस्कृति, दर्शन, आध्यात्मिकता और जीवन मूल्यों का मूल स्रोत वेद हैं। वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि इनमें मानव जीवन, प्रकृति, समाज, शिक्षा, चिकित्सा, विज्ञान और नैतिकता से संबंधित गहन ज्ञान समाहित है। इस अमूल्य वैदिक ज्ञान को सुरक्षित रखने और आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने में वेद विद्यालयों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसलिए आज के समय में वेद विद्यालयों की आवश्यकता पहले से अधिक बढ़ गई है।

वेद हजारों वर्षों से गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से संरक्षित होते आए हैं। वेद विद्यालय विद्यार्थियों को शुद्ध उच्चारण, मंत्रों के स्वर, अर्थ तथा वैदिक परंपराओं का प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। यदि इस ज्ञान का संरक्षण नहीं किया गया तो हमारी सांस्कृतिक धरोहर का एक महत्वपूर्ण भाग लुप्त हो सकता है।

आधुनिक शिक्षा जहाँ मुख्य रूप से रोजगार और तकनीकी ज्ञान पर केंद्रित है, वहीं वेद विद्यालय विद्यार्थियों को नैतिकता, अनुशासन, सत्य, अहिंसा, सेवा, करुणा और सदाचार जैसे जीवन मूल्यों की शिक्षा देते हैं।

इससे विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास होता है और वे समाज के जिम्मेदार नागरिक बनते हैं। आज की भागदौड़ भरी जीवनशैली में तनाव और मानसिक अशांति एक बड़ी समस्या बन गई है। वेद विद्यालय ध्यान, योग, जप और आध्यात्मिक साधना के माध्यम से विद्यार्थियों के मानसिक और आत्मिक विकास में सहायता करते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास, धैर्य और सकारात्मक सोच का विकास होता

है। हमारा वेद एक स्वस्थ मनुष्य का निर्माण करता है।

केवल बीमारी का अभाव ही स्वास्थ्य नहीं कहलाता। यह तो मात्र शारीरिक स्वास्थ्य का एक पक्ष है। वास्तविक और पूर्ण स्वास्थ्य वह है, जिसमें व्यक्ति शारीरिक रूप से स्वस्थ होने के साथ-साथ मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक रूप से भी संतुलित एवं सशक्त हो। जो व्यक्ति तन और मन दोनों से स्वस्थ है, वही वास्तव में पूर्णतः स्वस्थ कहलाने का अधिकारी है।

इसके साथ साथ यह हमारी भारतीय संस्कृति और परंपराओं का संवर्धन करता है। वेद विद्यालय भारतीय संस्कृति, संस्कृत भाषा, यज्ञ-विधि, शास्त्रीय परंपराओं और धार्मिक संस्कारों के संरक्षण एवं संवर्धन का कार्य करते हैं। इनके माध्यम से नई पीढ़ी अपनी जड़ों से जुड़ी रहती है तथा अपनी सांस्कृतिक पहचान को समझती है। ♦

पता : ओलड वीआईपी रोड, निकट राम जानकी मन्दिर
विद्याचल, गिर्जापुर-201307

मो. : 9354936909

लघुकथा

रिटर्न गिफ्ट

□ डॉ. सत्यनारायण 'सत्य'

शहर के जाने-माने समाजसेवी और उभरते हुए नेताजी सक्सेना जी का फोन आया। "भाई साहब आज सुबह 10:00 बजे अस्पताल में चलना है, मरीजों को फल बांटने का एक छोटा सा कार्यक्रम तय हुआ है।"

निर्धारित समय पर मैं अस्पताल पहुंच गया। सक्सेना जी भी अपने युवा कार्यकर्ताओं की टीम के साथ वहां आ गए। पर फल वितरण शुरू नहीं हुआ। कुछ समय बाद कैल क कैरट मंगवाए गए। फिर भी फल वितरण शुरू नहीं हुआ। उसके बाद कैमरामैन आया और मरीजों को एक-एक कैला बांटते हुए धड़ाधड़ फोटो निकालने लगा। मुझे यह दृश्य देखकर बड़ा अजीब लग रहा था। एक कैला और पांच सात कार्यकर्ता और मरीज बेचारा सकपकाया हुआ कभी कल को और कभी हम सबका देखता। इससे पहले भी सक्सेना साहब गौशाला में जाकर गायों को चारा खिलाना या फिर किसी की शोक सभा में जाकर आटा तेल देने या फिर गरीबों के लिए छोट-माटी सहायता के काम करत आ रहे थे मुझे अच्छा भी लगता था कि आज के दौड़ में भी ऐसे भले लोग हैं।

मैंने पास में खड़े कार्यकर्ता रामलाल जी को कह ही दिया देखा हमारे नेताजी कितने दानवीर हैं जो लोगों का कितना भला कर रहे हैं! उन्होंने मंद मंद मुस्कुराते हुए कहा हां भाई वह तो दिख ही रहा है। मैंने फिर पूछा-भाई साहब बांटना तो ठीक है पर क्या यह काम बिना कैमरे के नहीं हो सकता, इससे बेचारा लेने वाला इतना शर्मिदा नहीं होगा! अब कार्यकर्ता जी ने मुस्कुराते हुए कहा-

अरे भाई, यह कैमरा ही तो हमारा मोटिवेटर है, जो हमें अच्छे अच्छे कामों के लिए प्रेरित करता है। खैर, यह तुम नहीं समझाग। यह गिफ्ट नहीं है बल्कि आने वाल रिटर्न गिफ्ट की तैयारी चल रही है। और आसपास के लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। मैं मन ही मन समझ गया। कुछ ही समय बाद चुनाव आने वाले थे और सक्सेना जी नगर पालिका अध्यक्ष के सबसे उपयुक्त उम्मीदवार लग रहे थे। ♦

पता : समता भवन के पास, रायपुर, जिला-भीलवाड़ा, राजस्थान-311803

मो. : 94603 51881

यश मालवीय के नवगीत

फूल सा हल्का हुआ मन

फूल सा हल्का हुआ मन
बोलकर तुमसे
आँख भर बरसा घिरा घर
बालकर तुमसे

स्वप्न पील पड़ गए थे
तुम गए जब से
बहुत आजिज आ गए थे
रोज के ढब से

मौन फिर बुनता हरापन
बोलकर तुमसे

तुम नहीं थे, खुशी थी
जैसे कहीं खोई
तुम मिले तो ज्यों मिला
खोया सिरा कोई

पा गए जैसे गड़ा धन
बोलकर तुमसे

आ गया मधुमास.....

आ गया मधुमास
लेकिन तुम नहीं हो!
स्वच्छ है आकाश
लेकिन तुम नहीं हो!

समय है गतिशील
लकिन 'लेट' गाड़ी है
राह में झरना
मगर ऊँची पहाड़ी है

पत्थरों पर घास
लेकिन तुम नहीं हो!

तुम मिलागे यहीं,
खुशबू में नहात से
और चेहरे पर
सुबह के छः बजाते से

है अडिग विश्वास
लेकिन तुम नहीं हो!

पंचमी का चाँद

दे रहा हूँ पंचमी का चाँद तुमको
याद रखना
जेहन में यमुना किनारे का
इलाहाबाद रखना

प्यार की अपनी कहानी का
तर्जुमा है बहुत मुश्किल
भँवर केवल भँवर ही है
दूर तक है नहीं साहिल

मगर फिर भी एक मौलिक लहर
सा
अनुवाद रखना

ये किल के बुर्ज स
उड़ रहे पंछी और बादल
ये सुनहला, कुछ रुपहला,
धूप का रेशमी आँचल

इस उफक से उस उफक तक
धुंध में आबाद रखना

मिल रहीं दो नदी ऐसे
जिस तरह हम तुम मिले थे
दूर तक विस्तार का जल था,
हमारे लब सिले थे

होंठ पर फिर से वही
खोया हुआ संवाद रखना।

सोनचिरैया फिर उदास है

शायद कोई बात खास है
सोनचिरैया फिर उदास है

पेड़ बजं
ज्यों बजे झुनझुना
आँखों में जल
भरा गुनगुना

छिपा न जाने कहाँ हास है?

मुख पर साँझ
उतर ज्यों आई
कुछ कहती
अपनी परछाई

आँगन का मद्धिम उजास है

चले पेट में
जैस कलछुल
तबियत होती
पलछिन आकुल

यह सब कुछ क्या अनायास है?



पता : रामेश्वरम
उमाकांत मालवीय मार्ग,
A : 111, मेंहदौरी कॉलोनी,
प्रयागराज-211004
मो. : 6307557229



सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रमुख प्रकाशन



- उत्तर प्रदेश मासिक** : समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार की मासिक पत्रिका समूल्य उपलब्ध एक अंक रु. 15/- मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/- मात्र।
- नया दौर (उर्दू)** : सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विषय की एक उर्दू मासिक पत्रिका, एक अंक रु. 15/- मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/- मात्र।
- वार्षिकी (हिन्दी/अंग्रेजी)** : उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तृत आंकड़ों एवं सूचनाओं का वार्षिक विवरण मूल्य रु. 325/- मात्र।

महत्वपूर्ण प्रकाशनों के लिए सम्पर्क करें



सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र.
दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
उत्तर प्रदेश के समस्त जिला सूचना कार्यालय